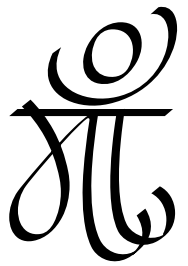

आलोक सेठी

Maa
by Alok Sethi

प्रथम संस्करण	:	12 मई 2012
क़ीमत	:	**₹ 200/-**
लेखक	:	**आलोक सेठी** हिन्दुस्तान अभिकरण, पंधाना रोड, खण्डवा (म.प्र.) फोन : 0733-2223003, 2223004 मोबाइल : 094248-50000 e-mail : hindustanabhikaran@yahoo.co.in web : www.hindustanabhikaran.com
वितरक	:	**अजय पब्लिशर्स एण्ड ड्रिस्ट्रीब्यूटर्स** मोती मस्जिद के पीछे, भोपाल (म.प्र.) फोन : 0755-2442556
प्रकाशक एवं मुद्रक	:	**श्रीमती एस. गुप्ता** क्वालिटी पब्लिशिंग कम्पनी 104, आराधना नगर (कोटरा) भोपाल (म.प्र.)
रूपांकन	:	**'राग-रंग'** 3/1 ओल्ड पलासिया, इन्दौर (म.प्र.) फोन : 0731-2560265, 2560282 e-mail : adraag@gmail.com web : www.adraag.com

इस पुस्तक में लेखक द्वारा लिखे गये किसी भी अंश को कोई किसी भी तरह उपयोग में लेना चाहे तो लेखक को व्यक्तिगत कोई आपत्ति नही है।

follow us on www.facebook.com/aloksethi

॥ समर्पित ॥

जुझारू माँ
श्रीमती कांतादेवी
एवं
कर्मयोगी पिता
श्री कमलचंद जी सेठी को।

जो.....

जीवन की डगर पर...
एक कमरे के उस मकान से
जीवन के इस मुकाम तक
न दु:ख में घबराए
और...
न ही कभी सुख में फूले समाए।

अपनी बात...

मध्यप्रदेश में एक क़स्बा है 'खंडवा'। दिग्गज साहित्यकारों एवं कलाकारों की कर्मभूमि रहे इस नगर की आबोहवा में आज भी साहित्य एवं संस्कृति के पराग उड़ते नज़र आते हैं। शहर महालक्ष्मी की पूजा-अर्चना में भले ही पीछे रह गया हो, किन्तु माँ सरस्वती की उपासना सदैव करता आया है। शहर को शब्द की समझ है। वह अच्छे शे'र पर दाद दे सकता है, भीगी हुई कविता पर अपनी आँखें भिगो सकता है,गीत-संगीत के सुरों के सुर मिला सकता है, अध्यात्म के भवसागर में डुबकी लगा सकता है। इसी माहौल ने मुझ जैसे एक टायर-ट्यूब बेचने वाले दुकानदार में भी कुछ लिखने-पढ़ने के बीज बो दिये। प्रियजन इसे लगातार सींचते रहे और उर्वरक डालते रहे।

मैं बड़भागी हूँ कि जीवन में बड़ा कुटुम्ब, ननिहाल पक्ष और ससुराल मिला। जीवन में दोस्त और स्नेही भी ख़ूब मिले। इनके साथ ने इस बात को शिद्दत से सिखाया कि रिश्तों में क्या ताक़त होती है। यह भी बार-बार आज़माया कि जब कभी दूसरे रास्ते बंद नज़र आते हैं, इन्हीं में से ही कोई बाहें थामे पार लगाने के लिए साथ खड़ा हो जाता है। रिश्तों में सबसे पावन और पुनीत संबंध है - जन्मदाता और संतान का। मैंने इस रिश्ते पर क़लम चलाने की जुर्रत की है। हौसला तब बड़ा जब इस विषय पर पहली पुस्तक 'तुरपाई...उधड़ते रिश्तों की' को अभूतपूर्व प्रतिसाद मिला। पिछले पाँच सालों में अनेक संस्करण और हज़ारों प्रतियाँ सारे देश में फैली। यह पुस्तक उसी के प्रथम भाग माँ का परिवर्धित संस्करण है।

आदर्श पुत्र तो मैं भी नहीं बन पाया, मुझसे भी जीवन में अनगिनत बार अपने माता-पिता की जाने-अनजाने में अवमानना अवश्य ही हुई है। मैंने इसकी पीड़ा और टीस को समझकर कुछ लिखने का प्रयास किया है। इस विषय पर पहले भी बहुत कुछ लिखा जा चुका है, उनमें से भी चुनिंदा मोतियों को इकट्ठा कर एक धागे में पिरोने वाले स्वर्णकार की अदनी सी भूमिका मैंने निभायी है। मेरी यह किताब दुनिया की उन तमाम माँओं को समर्पित है, जिन्होंने अपनी छाती के ख़ून को दूध में

तब्दील कर अपनी औलादों को यह दुनिया दिखाई है। जीवन के अनुभव से कहना चाहता हूँ कि यदि हम माँ की शरण में हैं, तो हमें मंदिर या मस्जिद जाने की ज़रूरत नहीं। यह सुनी-सुनाई बात नहीं है,आज़माई हुई है। ज़िंदगी की तमाम दौड़-भाग में जब-जब भी ऐसा लगा है कि किसी तरह के विपरीत या अवसाद ने आन घेरा है और एक क्षण भर के लिये मैंने अपनी माँ को याद किया है,तो सच मानें कि वह मुश्किल एक मिनट में फुर्र हो गई है। अब आप चाहें तो मेरी इस बात को अतिरंजित मान सकते हैं, लेकिन मैं आपसे गुज़ारिश करूँगा कि मेरे इस फ़ार्मूले को आज़माकर देखिये, यक़ीनन मुश्किलें आपसे कोसों दूर भागेंगी।

एक निवेदन और...न तो मेरी उम्र इतनी है और न ही अनुभव कि मैं जीवन दर्शन दे सकूँ। क़लम पर सरस्वतीजी की भी बड़ी कृपा अभी तक नहीं हो पाई है। आर्थिक लाभ एवं यश की भी कामना नही है, एकमात्र उद्देश्य यह है कि ये अमृत बूँदे किसी के भी जीवन में कुछ क्षणों के लिये भी व्यवहार या भावनाको सकारात्मक कर सकें तो इस पुस्तक का उद्देश्य सार्थक हो जाएगा। ईश्वर की साक्षी में, मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मेरे जिस्म में प्रवाहित रक्त का एक-एक क़तरा मेरी माँ की नेमतों का क़र्ज़दार है। सिर्फ़ इसलिये नहीं कि उसने मुझे दूध पिलाकर पाला-पोसा, बल्कि इसलिए कि उसकी नसीहतों और मशवरों से मैं आपसे बतियाने के क़ाबिल बन सका... इसलिए माँ को समर्पित इस प्रकाशन को लेकर किसी भी तरह का संशय मेरे मन में नहीं है। अप्रतिम रचनाओं का यह गुलदस्ता निश्चित रूप से माँ के उन तमाम बेटों और बेटियों को अवश्य सुहाएगा,जिन्हें अपनी माँ, अम्मी, आई, बाई, जीजी, बा, बेबे, मम्मी या मॉम में ईश्वर में साक्षात दर्शन होते रहे हैं। मेरे और जाने-अनजाने रचनाकारों के यह शब्द फूल मातृ-सत्ता के पावन चरणों में सादर भेंट हैं।

अनुभवी लोगों से यह प्रतिक्रिया भी आई कि दर्जनों ग्रंथ लिख दो तो भी कोई फ़र्क़ नहीं पड़ने वाला। बात सही भी हो सकती है। किन्तु ऐसे दोराहे पर मुझे तो सदैव वह गिलहरी प्रेरणा देती है, जिसने प्रभु श्रीराम के लंका जाते समय पुल निर्माण में रेती के कण डाले थे। मैं भी यही मानता हूँ कि जब कभी मातृ-मंदिर का यशगान होगा मेरे इस अकिंचन प्रयास को गिलहरी के योगदान के समकक्ष तो रखा ही जाएगा।

यह पुस्तक माता और संतान के बीच सेतु में रेत के कुछ कणों का योगदान है...

■ **आलोक सेठी**

आभार...

कहते हैं अच्छी वाणी और बरसात के पानी पर सबका अधिकार होता है। यही विचार मन में लिये अधिकारपूर्वक वरिष्ठ और नामचीन रचनाकारों की कृतियाँ इस संकलन में लेने की उद्दण्डता कर बैठा। इस धृष्टता के लिये उन सभी रचनाकारों से हृदय से क्षमाप्रार्थना।

किसी भी वाक्य या दृष्टांत का उद्देश्य कदापि किसी के हृदय को ठेस पहुँचाना नहीं है लेकिन इसके बावजूद भी अगर कहीं, कभी किसी का मन दुखने का कारण बन गया हो तो मैं करबद्ध सविनय क्षमाप्रार्थी हूँ। मैं तो सिर्फ़ इतना जानता हूँ कि इस दुनिया में निर्दोष कोई नहीं है। निर्दोष तो सिर्फ़ वीतरागी होते हैं। मैं तो हाड़-माँस का एक अदना सा इंसान हूँ।

बेहद कठिन था रोज़मर्रा के व्यवसाय में से समय चुराकर इस पुस्तक को आकार देना। मेरे अपने परिवारजन, मित्रगण एवं दुकान का समर्पित स्टाफ इसे साकार करने में मेरा संबल बना। अनेक ऐसे साथी थे जिन्होनें अपनी आँखों से मेरे लिये सपने देखे। शायर मित्र सुफ़ियान क़ाज़ी, श्री विश्वास सोनी एवं श्री संजय पटेल, इन्दौर के अनमोल सुझावों से ही यह कृति आपके सामने है।

इस किताब में इस्तेमाल दृष्टांत, कविता, शायरी पिछले बीस वर्षों में पत्र-पत्रिकाओं, समाचार पत्रों, कवि-सम्मेलनों एवं मुशायरों आदि से जमा किये गये हैं। दुर्भाग्यवश अनेक बार स्रोत नोट नहीं किये जा सके या ग़लत हो गये। इन सारे स्रोतों की जानकारी न होने के बावजूद भी उन सभी लोगों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करना चाहता हूँ जिन्होंने जाने-अनजाने में इस पुस्तक के लिये योगदान दिया है। सभी पाठकों से अनुरोध है कि सही स्रोत का पता लगने पर कृपया ध्यान में लाएँ ताकि अगले संस्करण में भूल सुधार हो सके।

इस पुस्तक को मूर्त रूप देने में 'टीम एडराग' इन्दौर, साथी साहित्यकारों एवं अनेक प्रियजनों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उनका आभार मानकर शायद मैं उनके प्रेम की स्निग्धता ही कम करूँगा, फिर भी यह ज़रूर लिखना होगा कि इस संचयन के हर लफ़्ज़ और सफ़हे उनका स्नेह सुरभित है।

मेरे जीवन की ये अनमोल निधि आपको सौंप रहा हूँ आशा है अपनी बेबाक राय से मुझे अवश्य अवगत कराएँगे।

कृतज्ञ...

■ **आलोक सेठी**

आपकी बात...

प्रिय आलोक सेठी की पुस्तक मैंने पढ़ी। माँ पर अपनी क़लम और विभिन्न कवियों एवं शायरों की रचनाओं को लेखक ने एक जगह एकत्रित करने का जो प्रयास किया है वह सराहनीय तो है ही वरन् मैं कहना चाहता हूँ कि हिन्दी जगत को उनका आभार मानना चाहिए। आज सारा कला संसार इतने चैनलों द्वारा आपसी रिश्तों में ज़हर घोल रहा है। हक़ीक़त में हमारे आपसी रिश्ते केवल दिखावे भर को ही रह गए हैं। यहाँ पर ये पुस्तक ऐसी लगती है जैसे किसी ने आपसी सम्बन्धों के रेगिस्तान में प्यार की बौछार कर दी हो। आज वही माँ-बाप ख़ुश उनका फ़र्ज़ है और जो बच्चे उनके लिए कर रहे हैं वह बच्चों का उनके ऊपर अहसान है। पुस्तक में लिखे गए कई प्रसंग आँखों की कोरों को गीली कर देते हैं। प्रिय आलोक को मेरा साधुवाद और उनसे विनती है कि आपसी सम्बन्धों की कड़वाहट को ख़त्म करने के लिए ख़ुद भी लगातार लिखते रहे और जो भी सामग्री उन्हें मिले, वह इस संग्रह के अगले संस्करणों में जोड़ते रहें, जिन्हें पढ़ कर ऐसा कुछ हो जाए कि कोई भी माँ असहाय न रहे।

▪ **सुरेन्द्र शर्मा**
(हास्य कवि)
नई दिल्ली

अनुक्रमणिका

- तेरी रहमत की बारिश से मुरादें भीग जाती हैं 13
- इतना सामर्थ्य नहीं है 16
- सिर्फ़ माँ 19
- इमारत की नींव 21
- बगिया की माली 24
- योगदान 26
- नियंत्रण कक्ष 28
- मैं अकेला हूँ 31
- शहीद की माँ 33
- फिर कभी मंदिर नहीं गई 36
- अंजुरी में समुद्र 38
- पर्वत सी ऊँची सागर सी गहरी 40
- मामा से गुहार 46
- क्यों मनता है मदर्स डे 48
- बोली चिड़िया 50
- बैचेनी 51
- आँसुओं को पोंछने ख़्वाबों में आ जाती है 53
- नसीहतों वाली 56
- अम्मा की डाँट 59
- दृष्टि और अंतर्दृष्टि 61
- मीरा की पीर 63
- मटका 65
- चट्टान 67
- बंटी की मम्मी 'मायके' जा रही है 69
- हमारी माँ है 72
- उपहार 73
- थकी हारी 75
- फटे पुराने इक एलबम में... 78
- जीवन के कमरे का रौशनदान 79
- अम्मा 83
- झुलसते दिनों में कोयल की बोली 85

- सुनो! क्या कहती है वो ? 87
- बच्चों को ऐसा रखती है 89
- भोली प्यारी, पर उपकारी 91
- बच्ची हो गई अम्माँ 94
- जब खाना परोसती थी 97
- सबक़ 100
- माँई ओ माँई 103
- सहृदया 106
- कमख़ुदा न थी परोसने वाली 107
- घर का दिल 109
- नहीं लिख सकता कविता 111
- बहुत सारा हूँ उसका 114
- मार्गदर्शक 116
- अम्मा तेरी मुनिया 119
- सृजन 120
- एक महाकाव्य 122
- बिना माँ का घर 124
- बही खातों वाली माँ 126
- बात-बात का फ़र्क़ 128
- मातृत्व 130
- महज़ एक औरत नहीं 132
- ननिहाल 137
- क्योंकि मैं माँ हूँ 141
- चक्की 142
- माँ का बुलावा 143
- जीवन का मंत्र 145
- परिवार 147
- ममता का निर्झर है अम्माँ 151
- शीशा देने वाला 154
- शायरों के क़लम से... 161
- एक कविता मेरी भी... कोई तो है 172

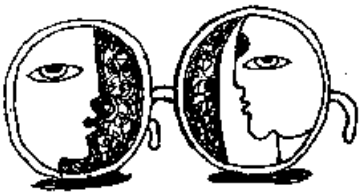

माँ संवेदना है, भावना है, अहसास है
माँ जीवन के फूलों में, ख़ुशबू का वास है

जैसी अमर पंक्तियों के रचयिता
और कवि-सखा
स्मृति शेष पं. ओम व्यास 'ओम'
इस प्रकाशन को संजोते वक़्त
मेरे मानस में हर लम्हा
जीवंत हो उठते थे।
'माँ' कविता ने ओमभाई को
वैश्विक ख्याति दी थी।
यह प्रकाशन अपने उस
अज़ीज़ मित्र के प्रति एक
भावपूर्ण आदरांजलि भी है;
सो सनद रहे।

- आलोक

आलोक सेठी की सुप्रसिद्ध पुस्तक
'तुरपाई...उधड़ते रिश्तों की'
के प्रथम भाग का परिवर्तित एवं परिवर्धित संस्करण...

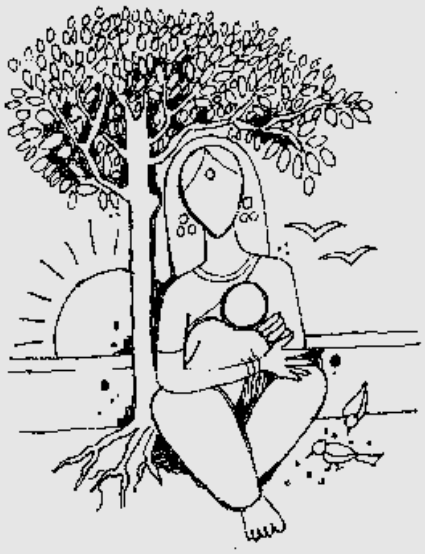

माँ के आँचल से अधिक शीतल कहीं न छाँव

दुनिया भर में फैले उन करोड़ों प्रशंसकों के मन अवसाद के गहरे सागर में डूब गये जब जंगल में लगी आग की तरह तेज़ी से यह ख़बर चली कि युवा दिलों पर राज कर रहे क्रिकेट खिलाड़ी युवराज सिंह को फेंफड़ों में असाध्य जर्मसेल कैंसर हो गया है।

कठिन से कठिन मैच में भी प्रतिद्वंदी को नाकों चने चबवाने वाले युवराज की रूह भी इस बीमारी के नाम से ही कँपकँपा गई... तूफ़ान से भी तेज़ आने वाली जटिल से जटिल बॉल पर भी छक्का जड़ देने वाले युवराज का हौसला यहाँ जवाब दे गया... उसकी पनीली आँखों में सारा नाम, प्रतिष्ठा, पैसा, चाहने वालों की भीड़ और तालियों वाले हाथ सब धूमिल हो गए...चारों तरफ़ छा गया स्याह अंधेरा जो कि ढलने का नाम ही नहीं ले रहा था...

इस घनघोर में से एक प्रकाश-पुंज बाहर आया... और युवराज के साथ बराबरी से खड़ा हो गया... सात समंदर पार दूर देश के उस सन्नाटे में असहनीय कीमोथैरेपी को ख़ुद युवराज बन झेला... ख़ुशनुमा ढाल बन हर पल उसे ज़िंदगी का गीत सुनाया... और आख़िर इस महायुद्ध से पुरज़ोर लड़ाई लड़ उस जानलेवा बीमारी की जान ले ली... वह प्रकाश, उजाला, अलौकिक रोशनी और कोई नहीं युवराज की माँ थी...शबनम। जीवन मरण के संघर्ष की इस बेला में शबनम ने सिर्फ़ एक माँ का ही रोल अदा नहीं किया। वह युवराज की दोस्त, सचिव, प्रवक्ता, नर्स और एक अच्छे सलाहकार यानी एक ऑलराउंडर बन गईं। जीवन के इस कठिनतम मैच को जीतने के बाद चेहरे पर अजेय योद्धा की मुस्कान और हाथ में ज़िंदगी का कप थामे युवराज ने सिर्फ़ यह कहा...''अगर माँ न होती तो मैं न होता''।

एक माँ ने फिर साबित कर दिया कि बेटा कितना ही बड़ा क्यों न हो जाए वह उसके लिए सिर्फ़ लंबा होता है बड़ा नहीं... माँ से उसका बच्चा कभी अलग नहीं होता वह तो धड़कता रहता है उसकी धड़कनों में...

तेरी रहमत की बारिश से मुरादें भीग जाती हैं

तुम्हारे पास आता हूँ तो साँसे भीग जाती हैं,
मुहब्बत इतनी मिलती है कि आँखें भीग जाती हैं।

तबस्सुम इत्र जैसा है, हँसी बरसात जैसी है,
वो जब भी बात करती है तो बातें भीग जाती हैं।

तुम्हारी याद से दिल में उजाला होने लगता है,
तुम्हें जब गुनगुनाता हूँ तो साँसे भीग जाती हैं।

ज़मीं की गोद भरती है तो क़ुदरत भी चहकती है,
नए पत्तों की आमद से ही शाख़ें भीग जाती हैं।

तेरे एहसास की ख़ुशबू हमेशा ताज़ा रहती है,
तेरी रहमत की बारिश से मुरादें भीग जाती हैं।

आलोक श्रीवास्तव

विधानसभा चुनाव जीतने के बाद जम्मू-कश्मीर में नेशनल कान्फ्रेंस में माहौल बड़ा कशमकश भरा था। 72 वर्षीय पिता फारूक़ अब्दुल्ला उम्र के इस पडाव पर भी मुख्यमंत्री बनने पर आमादा थे लेकिन अवाम, पार्टी कार्यकर्ता तथा कश्मीर के मौजूदा हालात पुत्र उमर अब्दुल्ला की ओर इशारा कर रहे थे। असमंजस की इस स्थिति में जब कोई निर्णय नहीं हो पा रहा था तब पार्टी को उमर की माँ की याद आई। पर साथ ही साथ उन्हें माँ के द्वारा कही गई एक बात बेहद डरा रही थी। उमर अब्दुल्ला की अंग्रेज़ माँ, मौली ने एक बार अपने बेटे के बारे में कहा था- उमर को राजनीति में जाने से पहले मेरी लाश पर से गुज़रना होगा...

मौली की इस धमकी के बाद भी नेशनल कांफ्रेस ने निर्णय करने का अधिकार माँ की झोली में डाल दिया। इस अशांत घाटी से दूर ही रहना पसंद करने वाली पसोपेश में पड़ी माँ ने प्रदेश की ख़ातिर वर्षों बाद श्रीनगर के लिए उड़ान भरी। अब्दुल्ला परिवार में एक पूरी रात बहस चलती रही और आख़िरकार मौली ने अपना फ़ैसला सुनाते हुए 72 वर्षीय फारुक़ अब्दुल्ला से कहा कि अब समय आ गया है कि वे देश की ख़ातिर अपने बेटे के लिए राह छोड़ दें। अपनी तड़क-भड़क और अति-नाटकीयता के लिए विख्यात फारुक़ अब्दुल्ला इससे बेहद भावुक हो गए और एक समय तो उनके आँसू तक बह निकले, लेकिन उनकी शरीक-ए-हयात मौली टस से मस नहीं हुई। अपने पति की नाराज़गी की तनिक भी चिंता न करते हुए बेटे का राज तिलक कर दिया और एक बार फिर किसी माँ ने देश की ख़ातिर अपने बेटे को बेहिचक बारुद के ढेर पर बैठा दिया ...

जिसकी कोई उपमा न दी जा सके वह है माँ, जिसकी कोई सीमा न हो उसका नाम है माँ, जिसके प्रेम को कभी पतझड़ ने स्पर्श न किया हो उसी का नाम है माँ।

घने बरगद की शीतल छाँव, बेजोड़ वास्तुकला के मंदिर, हीरक और स्वर्ण आभूषणों से लदी अति सुंदर पाषाण प्रतिमाओं को भी देखा है। लेकिन उनमें भी मुझे वह पवित्रता और निश्छल प्रेम नज़र नहीं आया जो दिन भर की कठिन थकान, झुलसती गर्मी, लाख लानत और ज़िल्लत के बीच मशीन की तरह काम कर रही किसी मज़दूर माँ के चेहरे पर अपने बच्चे को दुलारते समय नज़र आया।

परिवार की कितनी भी विषम परिस्थिति हो एक माँ ही है जो सदा समभाव से उसे झेल जाती है। माँ को परखा जाता है हर कसौटी पर और वह खरी उतरती है हमेशा। हालात चाहे कितनी ही कड़ी धूप बनकर क्यों न आ रहे हों, वे माँ के आँचल को पार कर उसकी संतान तक नहीं पहुँच सकते।

“चाहे कौशल्या हो, रज़िया हो,
गुरप्रीत हो या मरियम।
उसका दिल तो बस बच्चों के
शरीर में ही धड़कता रहता है।”

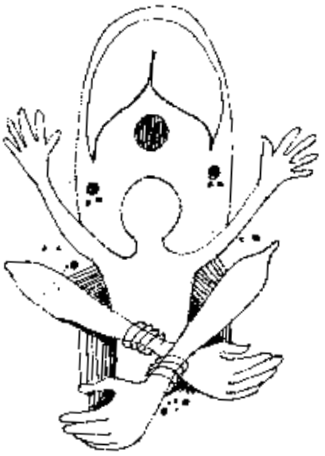

इतना सामर्थ्य नहीं है

तुझे गीत में बांध सकूं माँ
इतना सामर्थ्य नहीं है
धैर्य धरा ने मांगा तुमसे
अम्बर ने विस्तार लिया है
करके अनुनय इस धरती ने
तुमसे ही प्यार लिया है
प्रेम, त्याग, ममता और करूणा
तेरे हृदय की धड़कन है
तेरी महिमा जान सकूं माँ
इतना सामर्थ्य नहीं है

गोद में तेरी जन्मे खेले
ईश और अवतार सभी माँ
तुझसे उऋण न हो पायेगा
ये पूरा संसार कभी माँ
तुलसी, मीरा, सूर, कबीरा
तेरे ही आंचल के स्वर हैं
शक्ति तुम्हारी जान सकूं माँ
इतना सामर्थ्य नहीं है

वीर शिवाजी को तुमने ही
स्वाभिमान का पाठ पढ़ाया
बालक ध्रुव को तुमने ही तो
अटल नक्षत्र का यश दिलवाया
देश की खातिर कितने
शीश दिए तूने बेटों के
त्याग परिधि में बांध सकूं माँ
इतना सामर्थ्य नहीं है

किया नहीं तेरी ममता ने
भेद झोपड़ी और महलों का
देकर सब आशीष दुआएँ
अंश दिया सब पुण्य फलों का
बच्चों की मुस्कान पे हँसती
बच्चों के दु:ख में रोती है
तेरी ममता बांध सकूं माँ
इतना सामर्थ्य नहीं है

राधा शाक्य

मेरी पीढ़ी के हिन्दी फ़िल्म दर्शकों को यह डायलॉग स्मरण करने के लिए दिमाग़ पर ज़्यादा ज़ोर नहीं डालना पड़ेगा। हिन्दी फ़िल्म 'दीवार' के एक दृश्य में नायक अमिताभ बच्चन जो कि फ़िल्म में एक स्मगलर के रोल में है, अपने ईमानदार पुलिस ऑफ़िसर भाई शशिकपूर को मिलने एक पुल के पास बुलाते हैं। जब बेईमानी और ईमानदारी के बीच बहस अपने चरम पर पहुँच जाती है तो अमिताभ कहते हैं... मेरे पास बंगला है, गाड़ी है, पैसा है, शोहरत है।
बोल ...तेरे पास क्या है।

शशिकपूर का जवाब होता है....मेरे पास माँ है।

अमिताभ निरूत्तर हो जाते हैं और हॉल तालियों से गूँज उठता है।

यह चार शब्दों का जवाब हिन्दी फ़िल्म इतिहास का सबसे सुपरहिट डायलॉग हो गया। इतना सुपर हिट कि ऑस्कर पुरस्कार ग्रहण करते हुए संगीतकार ए.आर. रहमान ने भी अपने उद्‌बोधन में अपनी माँ के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए इसी डायलॉग को दोहराया।

सलीम-जावेद की जोड़ी के लिखे इस कालजयी डायलॉग में एक सीधा सा संदेश छिपा है। माँ के प्रेम का पलड़ा हमेशा अच्छाई कीओर झुकता है और बुराई को ख़ारिज करता है।

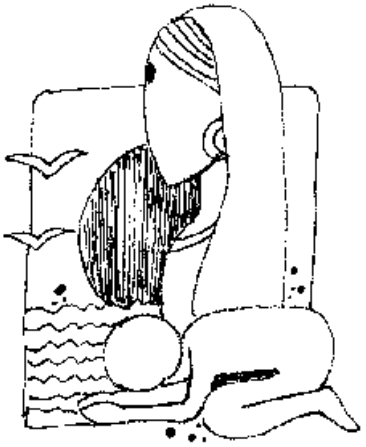

सिर्फ़ माँ

माँ सिर्फ़ माँ होती है
प्रारंभ से अंत तक
हमारे ऊँचे मुक़ाम तक पहुँचने में
माँ चुक चुकी होती है पूरी तरह
पर अब एक लौ दिपदिपाती है उसकी आँखों में
हमारी ऊँची उड़ानें उसे आत्म-गौरव से पूर देती हैं
उसकी आश्वस्ति अब विस्तार पाती है।
पानी के पंखों पे सवार हो
लहरों से जीतना चाहती है वह, पर...

कितनी भोली है माँ

हमारी उड़ानें हमें उससे दूर ले जाती हैं ...अनवरत

उसकी प्रतीक्षा और हमारी प्रगति

एक-दूसरे से होड़ करते हैं और

इस होड़ में हम जीत जाते हैं।

माँ दूसरे छोर पर उदास बैठी रह जाती है

...ठगी सी।

✍
अज्ञात

"

भीड़ भरा चौरस्ता हूँ मैं
घर की एक डगर है माँ
रहा उम्र भर एक सफ़र में
जब भी लौटा घर है माँ
रोज़ बदल लेता हूँ चेहरे
अपना चेहरा भूल गया
गुमा हुआ चेहरा, आँचल में रखती है
सहेजकर माँ।

"

- डॉ. किशन तिवारी

इमारत की नींव

अमेरिकन क्रांति के प्रणेता और अमेरिकी लोगों के नायक जॉर्ज वॉशिंगटन अपने आज़ाद राष्ट्र के राष्ट्रपति पद की शोभा बढ़ाने वाले थे। पूरा सभागार खचाखच भरा हुआ था। सब अपने चहेते नायक के भाषण का इंतज़ार कर रहे थे। सामान्य दीर्घा में एक बूढ़ी महिला चुपचाप बैठी हुई थी। तभी किसी ने पहचाना, यह श्रीमती मैरी बॉल वॉशिंगटन है। महान राष्ट्रपति की महान माँ सामान्य अमेरिकी नागरिक की तरह अपने महान राष्ट्रपति पुत्र को देखने आई थी।

जन्म के थोड़े समय बाद ही मैरी के सिर से पिता का साया उठ गया और मैरी की माँ ने दूसरी शादी कर ली।

ज़िंदगी ठीकठाक चल रही थी। उन दिनों यूरोप में स्त्री को शिक्षित करने का ख़ास प्रचलन नहीं था। सिलाई, कढ़ाई, बुनाई और घरेलू कामों में दक्ष होना ही स्त्री के लिए आवश्यक था। मैरी भी अपवाद नहीं थी। माँ उसे सब कामों में दक्ष बना रही थी, साथ ही चर्च के पाठों को सीखने का सिलसिला चल रहा था। मैरी अभी तेरह साल की हुई थी कि तभी माँ भी हमेशा के लिए छोड़ गई। अब मैरी बिल्कुल अकेली थी।

ठीक इसी वक़्त अमेरिका में रहने वाले ऑगस्टीन वॉशिंगटन को भी ज़रुरी काम याद आता है और वे लंदन का रुख़ करते है। दोनों मिलते हैं और इसकी परिणति 1730 में उनके परिणय के साथ होती है। 22 फ़रवरी, 1972 का दिन अमेरिकी इतिहास का शुरुआती पन्ना है। इस दिन मेरी अपने पहले पुत्र को जन्म देती है। उसका नाम रखा जाता है- जॉर्ज। यही जॉर्ज वॉशिंगटन आगे चलकर अमेरिकी क्रांति का अगुआ और इतिहास पुरुष साबित होता है।

माँ ने जार्ज को ज़िम्मेदारियों का एहसास करवाया। जॉर्ज को माँ की वजह से जल्दी ही समझ में आ गया कि वह परिवार का बड़ा लड़का है और उसे ज़्यादा समझदार होना पड़ेगा। मैरी ने उसकी शिक्षा से लेकर सामाजिक विकास तक के लिए सभी प्रयास किए। दरअसल वह सीमित शिक्षा के साथ विलक्षण बुद्धि वाली महिला थी। मेरी चाहती थी कि बच्चे उन सभी बातों को जाने जो उनके लिए लाभदायक हो सकती थी। जॉर्ज 14 साल का हो चुका था। दुनिया को समझने लगा था। उसके सौतेले भाई लॉरेन्स ने जॉर्ज को ब्रिटिश नेवी में शामिल होने का प्रस्ताव भेजा।

उन दिनों यह दुनिया की सबसे शक्तिशाली सैनिक प्रणाली थी और यह माना जाता था कि ब्रिटिश समुद्री सेना अजेय है। इस सेना का हिस्सा होना गौरव की बात थी। जॉर्ज ने जाने की तैयारी कर ली। सारा सामान बाँध

लिया गया, लेकिन माँ ने इजाज़त देने से साफ़ मना कर दिया। माँ का मानना था कि ऐसी सेवा मेंउसका संपर्कअपने लोगों से टूट जाएगा। एक लेखक ने लिखा है कि मेरी बॉल वाशिंगटन का यह फ़ैसला समुचित मानवता पर हमेशा एक क़र्ज़ की तरह रहेगा। यह बात सच साबित हुई। आगे चलकर जॉर्ज ने अमेरिकियों की दुनिया बदल दी।

उसने महानता के मापदंड स्थापित किए। यह एक महान माँ के बिना असंभव था। माँ का प्रभाव जॉर्ज के लिए एक ख़ज़ाने की तरह था। जब तक वे जीवित रहे अपनी माँ की यादों को उन्होने सहेजे रखा। जॉर्ज वाशिंगटन के राष्ट्रपति बनने के थोड़े समय बाद ही इस महिला ने हमेशा के लिए अपनी आँखें बंद कर ली। माँ मृत्युशैया पर भी प्रसन्न थी। आख़िर उसने अपनी संतान को सही जगह पहुँचा दिया था। एक और महान माँ संघर्ष करते हुए अपने बेटे के भविष्य की इमारत के लिए नींव की ईंट बन गई। जाने से पहले उन्हें संतोष था कि आख़िर उनके दूध ने कमाल दिखाया और उनके संघर्षो का पसीना उनके बेटे के हृदय पर नैतिकता बन कर चस्पा है। जॉर्ज का उदाहरण यह बताता है कि एक पुरुष अपनी पत्नी से सबसे ज़्यादा प्रेम करता है, लेकिन अपनी माँ से हमेशा प्रेम करता है। माँ नदी की तरह होती है, हमेशा देती है।

"माँ की गोद
दुनिया का सबसे प्रतिष्ठित
विश्वविद्यालय है"

बगिया की माली

पूजा वाली थाली माँ
जीवन की ख़ुशहाली माँ
कोना कोना रोशन कर दे
है, कितनी उजियारी माँ
रंग रूप से ऊपर है
गोरी हो या काली माँ
हम हैं, फूल बगीचे के
है बगिया की माली माँ
हर पल रखती ध्यान हमारा
रहे कभी ना ख़ाली माँ

हम तूफ़ानों से लड़ते हैं,
हिम्मत देने वाली माँ
देख हमारी मुस्कानों को
जैसे सब कुछ पा ली माँ
हमको शीतल छाया देती
फूलों वाली डाली माँ

सतीश उपाध्याय
कोरिया, छत्तीसगढ़

“माँ के क़दमों तले
ढूँढ ले जन्नत अपनी
वरना तुझको कहीं
जन्नत नहीं मिलने वाली
जिनके माँ–बाप ने
फुट–पाथ पर दम तोड़ दिया
उनके बच्चों को
कहीं छत नहीं मिलने वाली”

– हसन काज़मी

योगदान

माँ का मोल तो कोई दे ही नहीं सकता, लेकिन घर के दूसरे कामों में भी माँ का कोई सानी नहीं है। यदि घर के छोटे-बड़े सभी कामों को ही ले तो माँ के द्वारा किए जाने वाले कार्यों की लागत इतनी है, जितनी शायद हमारी सालाना आमदनी भी नहीं होगी।

लंदन में हुई एक रिसर्च में यह बात सामने आई है। यदि किसी और व्यक्ति से माँ द्वारा घर के लिए किए जाने वाले काम कराए जाएँ तो ख़र्चा होगा 25000 पाउंड या 20 लाख़ रू. सालाना। क्या आप जानते हैंकि एक महिला घर के लिए क्या-क्या करती है और कितने समय वह काम करती है। जितना समय कोई

व्यक्ति नौकरी में नहीं देता, उससे कहीं ज़्यादा समय माँ घर में देती है। इसीलिए घर संभालना फ़ुल टाइम जॉब है। घर के काम में माँ सप्ताह में 66 घंटे देती है। इसमें बच्चों की देखभाल के 22 घंटे भी शामिल हैं। 15 घंटे घर की सारी व्यवस्था के लिए। 11 घंटे खाना और नाश्ता बनाने के लिए और 10 घंटे साफ़-सफ़ाई के लिए। यदि इन सारे कामों के लिए भुगतान किया जाए तो एक सप्ताह में माँ को 470 पाउंड या 37600 रू. प्रति सप्ताह का भुगतान करना पड़ेगा। इसमें बच्चों की देखरेख में सबसे ज़्यादा 158 पाउंड यानी 12640 रू. ख़र्च हो जाएँगे। इसके बाद घर की सारी व्यवस्था में सप्ताह में 116 पाउंड यानी 10,880 रू. का ख़र्च आता है। यह सही है कि लंदन चूँकि सबसे महँगा है, इसलिए वहाँ और अन्य स्थानों (भारत में भी) पर इन कामों की दरें अलग-अलग हो सकती हैं, लेकिन माँ हमेशा अच्छे से अच्छा काम ही करके देती है।

बच्चे के साथ ही जन्म लेती है माँ।
पहले वह थी ही कहाँ ?
वह तो स्त्री ही थी।
माँ का दर्जा तो उसे बच्चे से ही मिला है।

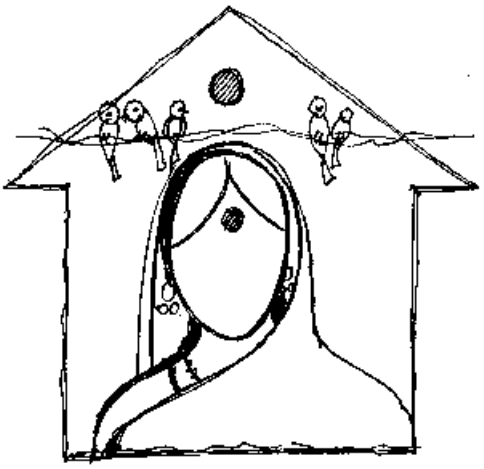

नियंत्रण कक्ष

घर का वह हिस्सा जिसे
रसोईघर कहते हैं
सुबह के वक़्त अस्थायी रूप से
परिवर्तित हो जाता है एक कंट्रोल रूम
में
जहाँ से नियंत्रित होता है
समूचे घर का बेतरतीब यातायात
कौन, किससे पहले नहाएगा
छोटे की बेल्ट शायद
लॉबी में रखी मेज़ के नीचे होगी
लगता है बड़ा आज फिर से रूमाल
जेब में रखना भूल गया है

ख़ाली पेट जाओगे तो
कैसे पढ़ पाओगे दिनभर
ये क्या ? कल के टिफ़िन में आधा खाना
वैसा ही रखा हुआ है
अगर आप ख़ुद ही देर से उठोगे तो
बच्चे तो फिर बच्चे हैं
सभी के लिए अलग-अलग तैयार होते
खाने के डिब्बों से आती ख़ुशबू के
साथ ही
कंट्रोल रूम से जारी होते हैं
ये तमाम दिशा-निर्देश
और पूरे घर में लहराते हैं
कभी नसीहत, डाँट, झल्लाहट
तो कभी चिंता
ग़ुस्से और नाराज़गी के स्वर लेकिन
हमेशा
स्नेह की चाशनी में तर-ब-तर
बीमारी या फिर और किसी भी मजबूरी
में
जब कर देता है तो दुनिया के तमाम घरों
में मानो
अफ़रातफ़री मच जाती है
और ठहर सा जाता है जीवन का
यातायात

डॉ. कुमार विनोद, कुरूक्षेत्र

पिछले दिनों भारत का एक औद्योगिक घराना भाईयों के आपसी अलगाव के कारण हिल गया था। इसके कंपन को सारे देश ने महसूस किया, देश में लाख़ों शेयर होल्डर्स, आम नागरिक एवंदेश की सत्ता तक चिंता में पड़ गई कि अब क्या होगा? बड़े-बड़े दिग्गज समझौते के लिये बीच में आए किंतु खाई और बढ़ती ही गयी। इस समय शायद...आसमान से देख रहा इस घराने का पितृ-पुरूष भी अपने ख़ून से सींचे इस बाग़ की ऐसी दुर्दशा पर आँसू बहा रहा होगा।

जब सुलह के सारे रास्ते बंद हो गये तब जो ताक़त बीच में आई, वह थी माँ। पैसा सगा और भाई पराया ही रहेगा का मंत्र जपने वाले भाई भी एक बात पर सहमत हो गये, माँ जो भी करेगी वह हम दोनोंको मंज़ूर है, और माँ ने बैठकर सुलह का रास्ता निकाल दिया।

ऐसे समय भारत के साथ-साथ सारे विश्व ने एक बार फिर महसूस किया माँ की ताक़त को। सारा देश चिंतामुक्त हो कर मन ही मन उस माँ को प्रणाम करने लगा।

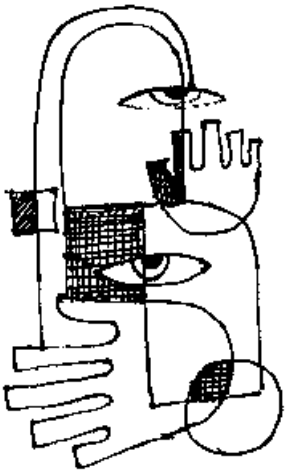

मैं अकेला हूँ

माँ के लिए एक ख़त
मैं अकेला हूँ उकता चुका मेरी सिगरेट का धुआँ
मुझसे उकता चुकी मेरी कुर्सी
मेरे दु:ख मौसम में किसी हरे खेत को
तलाशते चिड़ियों का एक झुंड है
मैं परिचित हुआ उनकी थकी सभ्यताओं से।
मैं हिन्दुस्तान गया, चीन गया मैं
मैंने समूचे पूर्व का भ्रमण किया
मुझे कहीं नहीं मिली वह स्त्री
जो मेरे सुनहरे बाल काढ़ती।

एक स्त्री जो अपने बटुए में
छिपाती मेरे वास्ते एक टॉफ़ी।
एक स्त्री जो मुझे कपड़े पहनाती
जब मैं होता निर्वस्त्र
और गिर जाने पर उठाती मुझे।
मैं... मैं हूँ वह लड़का
जो निकल गया था समुद्री यात्रा पर
बँधा हुआ लेकिन अब भी उसी टॉफ़ी से।

सीरिया के विख्यात कवि
***श्री निज़ार रब्बानी** की कविता का हिन्दी अनुवाद*

"

तुम्हे जब से चाहती हूँ
जब तुम्हारा अस्तित्व भी नहीं था।
तब से जुड़ी हूँ,
जब तुमने संसार को देखा भी नहीं था।

"

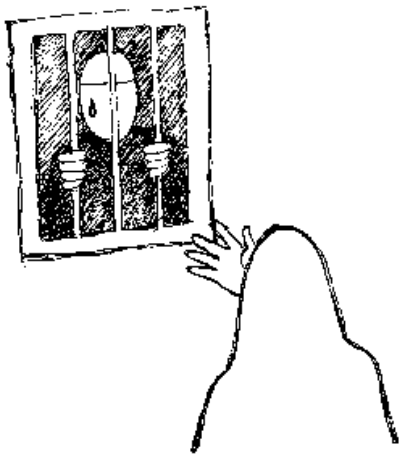

शहीद की माँ

एक अफ्रीक़ी कहावत है कि हाथ जो पालना झुलाते हैं दरअसल वही हाथ राष्ट्रों पर शासन करते हैं और भाग्य का निर्माण करते हैं। हिन्दुस्तान ऐसी माँओं की कहानियों से अटा पड़ा है। इनके नाम गुम चुके हैं और आज खोजने पर भी जिजी विषा की कहानियों में उनका नाम तक नहीं मिलता। ऐसी ही माताओं में एक नाम रामप्रसाद बिस्मिल की माँ का भी है। किसी भी दस्तावेज़ में इस महान महिला का उल्लेख नहीं है। रामप्रसाद बिस्मिल के बाज़ुओं को ज़ोर देने वाली माता ने रामप्रसाद का आख़िरी समय तक साथ दिया। इस महान व्यक्ति की माता ने रामप्रसाद को बनाने का काम किया था। आदमी वही बनता है जो उसकी माँ

उसे बनाती है। ग्यारह वर्ष की कम उम्र में बिस्मिल की माँ का विवाह पंडित मुरलीधर के साथ सम्पन्न हुआ। बिस्मिल की माँ अशिक्षित थीं, लेकिन दुनियावी समझ उनमें काफ़ी विकसित थी।

वे लगातार लड़ती रहीं देश के लिए अंग्रेज़ों के साथ और बेटे को सही साबित करने के लिए समाज के साथ। आख़िर में वह मुश्किल घड़ी भी आ गई, जब काकोरी कांड केस में रामप्रसाद को फाँसी की सज़ा सुनाई गई। 19 दिसंबर, 1927 का दिन फाँसी के लिए मुक़र्रर हुआ। बिस्मिल के पिता ने सोचा कि शायद माँ यह आघात बर्दाश्त न कर पाए और अकेले ही बिस्मिल से मिलने जाने का फ़ैसला किया। जब पिता वहाँ पहुँचे तो पाया कि बिस्मिल की माँ पहले ही जेल पहुँच चुकी हैं। माँ के साथ क्रांतिकारी शिव वर्मा भी थे। अब संकट था कि शिव वर्मा को अंदर कैसे ले जाया जाए। माँ ने हिम्मत जुटाई और कहा यह मेरी बहन का बेटा है। जो क्रांति की भावना उस माँ से उसका बेटा छीन रही थी। वह आज भी इस भाव के प्रति कितनी समर्पित थी। माँ को देखते ही बिस्मिल रो पड़े। बिस्मिल को रोता देख माँ बोली- मैं तो समझती थी कि मेरा बेटा बहादुर है, जिसके नाम से अंग्रेज़ सरकार भी काँपती है। मुझे पता ही नहीं था कि वह मौत से डरता है। यदि तुम मरने से ही डरते थे तो इस तरह आंदोलन में बेमतलब ही आए। बिस्मिल ने समझाया कि ये आँसू मृत्यु के डर से नही वरन माँ के स्नेह से दूर होने की वजह से आँखों में आए। माँ ने शिव वर्मा को आगे करते हुए कहा कि अगर कोई संदेश पार्टी तक पहुँचना है तो शिव को बता दो। ग़ुलाम हिन्दुस्तान की गोद में हज़ारों बिस्मिल की माँएँ बिखरी पड़ी हैं। ठीक उन्हीं की तरह उनका नाम कोई नहीं जानता। ***एक स्पेनिश कहावत के अनुसार*** **''एक औंस माँ, टनों धर्म गुरुओं से कहीं अधिक मूल्यवान है। यह उदाहरण इस कहावत को सही साबित करता है।''**

राजस्थान के दर्शन भरतवाल लिखते हैं- हमारे घर मंगलवार के दिन सभी सदस्य व्रत रखते थे। एक दिन मुझे अपनी माताजी के साथ किसी के घर जाना पड़ा मंगलवार का दिन था। मेज़बान महिला बड़े अरमानों से हमारे लिये गरमा-गरम पकौड़े और चाय बनाकर लाई। उन्होंने बड़ी आत्मीयता से मुझसे पकौड़े खाने का आग्रह किया लेकिन मंगलवार होने के कारण न चाहते हुए भी मुझे मना करना पड़ा। मेरे स्पष्ट नकारात्मक उत्तर से उनका मुँह उतर गया। उन्होंने बेबसी से माँ की ओर प्लेट बढ़ाई। मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब माँ ने उपवास होने के बावजूद भी प्लेट में से एक पकौड़ा उठाकर खा लिया।

घर पहुँचते ही मैंने माँ से पूछा अपने यह क्या कर दिया? आपको तो बहुत पाप लगेगा। आपने उपवास तोड़ दिया। माँ ने मुझसे कहा-बेटे किसी का दिल रखना व्रत रखने से ज़्यादा ज़रूरी है। उसे नहीं टूटना चाहिए व्रत टूटे तो टूटता रहे। बेटे व्रत का अर्थ है हर कहीं हर वक़्त मत खाते रहो, लेकिन अगर कोई प्रेम से खिलाए तो उसका दिल भी मत दुखाओ। अगर तोड़ना ही पड़े तो दिल नहीं, व्रत तोड़ो। **ऐसी होती है माँ....।**

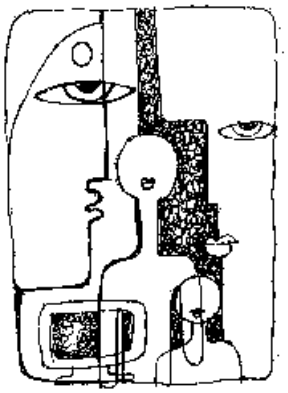

फिर कभी मंदिर नहीं गई

माँ नहीं हैं पर संभाले हूँ मैं उनका पुराना चश्मा
जिससे झाँकती उनकी आँखे रोक देती हैं मुझे
अगली गलती दोहराने से पहले...
कोने से खड़ी बेंत की मूठ पर रखा उनका हाथ,
सूझा देता है मुझे राह की अगली ठोकर खाने से पहले...
चारपाई के नीचे रखी उनकी चप्पलें देती है गति,
बर्फ हो गए मेरे पैंरो को....
सिरहाने के नीचे रखा सुई-धागा,
याद दिला देता है काम करती उनकी
उंगलियों की सतत चलते रहने की
मुझे कहता... और माँ का वह कमरा,
जो बन गया है इबादत का स्थान,
जिसे पाकर मैं फिर कभी मंदिर नहीं गई...

विश्व प्रसिद्ध लेखिका तस्लीमा नसरीन कहती हैं- मेरी माँ दयावान, कम से कम संसाधनों में जीने वाली करूणामयी माँ थी। उन्हें कोई वस्तु लुभा नहीं सकती थी। उन्हें तनिक भी परवाह नहीं होती थी कि उनकी फटी हुई मैली साड़ी देखकर कोई क्या कहेगा या क्या सोचेगा। एक बार मेरे छोटे भाई कमाल का दोस्त हमारे घर आया। माँ ने गेट खोला। दोस्त ने पूछा- कमाल घर पर है ? माँ ने कहा- नहीं। दोस्त ने पूछा आप कौन हैं ? माँ ने कहा मैं इस घर की नौकरानी हूँ। जब मैंने सुना तो अवाक् रह गई। मैंने माँ से पूछा- तुमने ऐसा क्यों किया ? माँ ने कहा- अगर यह मैली-कुचैली फटी साड़ी पहने मैं कहती कि मैं कमाल की माँ हूँ तो क्या कमाल की बदनामी नहीं होती ? **ऐसी होती है माँ...**

मैं आ नहीं सकता हूँ बलाओं के असर में
बस माँ की दुआएँ हैं मेरे साथ सफ़र में

- माजिद देवबंदी

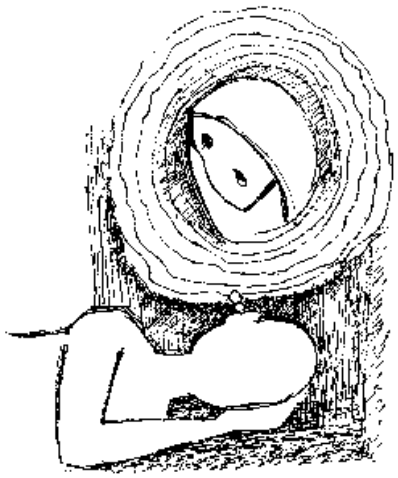

अंजुरी में समुद्र

सम्पूर्ण धरती है माँ
हमारी साँसों की धुरी पर घूमती
जहाँ सबसे पहले फूटे
जीवन के अंकुर
वह हमारे माथे पर
मोर पंख की तरह
बाँधती है वसन्त
हमारे घावों पर रखती है
रुई के फ़ाहों-से बादल
और हमारे होंठो तक
अंजुरी में भरकर लाती है समुद्र
आकाश हैं हम
उसके दोनों हाथों में उठे

एकांत श्रीवास्तव

हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि श्री मधुप पाण्डेय कहते हैं...

बच्चा जब पहली बार बोलने का प्रयास करता है, तब वह शरीर की सम्पूर्ण ऊर्जा को समेटकर कुछ शब्दों को उच्चारित करता है... शब्द ज़बान पर आते हैं... अधरों से टकराते हैं... टकराकर लड़खड़ाते हैं । इस लड़खड़ाहट में न शब्द स्वरूप का सौष्ठव होता है और न ही उच्चारण का व्याकरण।

परंतु माँ, और अकेली वह माँ है, जो बच्चे की इस लड़खड़ाहट को अपनाती है... प्रोत्साहन देती है... बलैयाँ लेती है।

ज़रा सोचिए, अगर माँ उस क्षण प्रोत्साहन नहीं देती... बलैयाँ नहीं लेती तो क्या यह मानव सभ्यता कभी बोलना सीख पाती ?

बच्चा, जब पहली-पहली बार चलने का प्रयास करता है, तब वह शरीर की सम्पूर्ण चेतना को समेटकर उठता है... उठकर चलता है... चलकर लड़खड़ाता है... इस लड़खड़ाहट में न शरीर संतुलन का सौष्ठव होता है और न ही पद संचालन का व्याकरण।

माँ, इस एक शब्द, एक अर्थ के आगे दुनिया के सारे शब्द, सारे ग्रंथ बौने लगते हैं। इसकी तुलना करने के लिये सदियों से दुनिया भटकती रही लेकिन उसकी खोज निरर्थक रही। यह शब्द, यह रिश्ता, यह ऊँचाई तो अतुलनीय है।

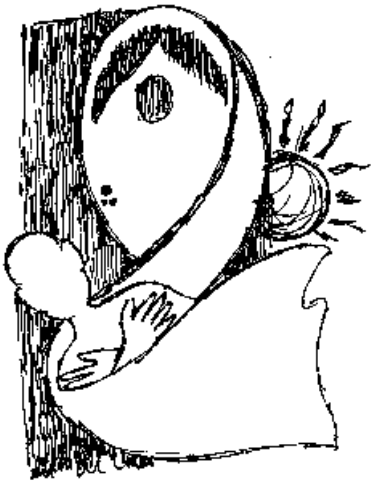

पर्वत सी ऊँची सागर सी गहरी

सूरज से
तेरी उपमा देने के लिये
कहता है मेरा मन
परंतु उसी क्षण
कुछ ध्यान आता है
और वही मन
हिचक जाता है
क्योंकि सूरज की
ऊर्जा तो तुझमें है
और है जन-जन को
जीवन देने की क्षमता
मन को छूने वाली ममता

परंतु यह भी
उतना ही सही है
कि सूरज की झुलसाने वाली
तेज़ तपन का
ज़रा सा भी अंश
तुझमें नहीं है
तेरे आँचल की शीतलता में
सूरज की सारी तपन
खो जाती है।
और इसलिए
सूरज की उपमा
तेरे सामने
बिलकुल व्यर्थ हो जाती है।

सागर से
तेरी उपमा देने के लिए
कहता है मेरा मन
परंतु उसी क्षण
कुछ ध्यान आता है
और वहीं मन
हिचक जाता है
क्योंकि सागर की
गहराई तो तुझमें है
और है वही धीरता
गहन-गंभीरता
परंतु यह भी

उतना ही सही है
कि सागर के खारेपन का
ज़रा सा भी अंश
तुझमें नहीं है
तेरे दूध की मिठास
सागर का खारापन
धो जाती है
और इसलिए
सागर की उपमा
तेरे सामने
बिलकुल व्यर्थ हो जाती है।

पर्वत से
तेरी उपमा देने के लिए
कहता है मेरा मन
परंतु उसी क्षण
कुछ ध्यान आता है
और वहीं मन
हिचक जाता है
क्योंकि पर्वतराज की
उंचाई तो तुझमें है
और है वही अचलता
जिसका कोई दूसरा
उदाहरण नहीं मिलता
परंतु यह भी
उतना ही सही है

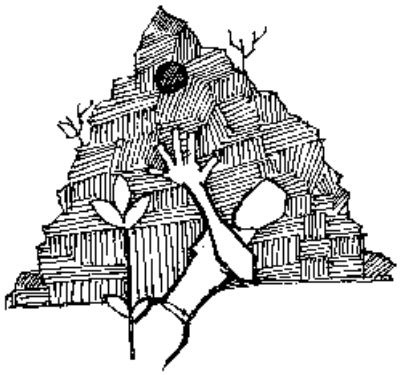

कि पर्वत की कठोरता का
ज़रा सा भी अंश
तुझमें नहीं है
तेरे मन की मृदुलता में
पर्वत की कठोरता
खो जाती है
और इसलिए
पर्वत की उपमा
तेरे सामने
बिलकुल व्यर्थ हो जाती है।

गगन से
तेरी उपमा देने के लिए
कहता है मेरा मन
परंतु उसी क्षण
कुछ ध्यान आता है
और वहीं मन
हिचक जाता है
क्योंकि गगन का
विस्तार तो तुझमें है
और है वही विशालता
निश्छल निर्मलता
परंतु यह भी
उतना ही सही है
कि गगन की अंतहीन दूरी का
ज़रा सा भी अंश

तुझमें नहीं है
तेरी गोद की समीपता में
गगन की अंतहीन दूरी
खो जाती है
और इसलिए
गगन की उपमा
तेरे सामने
बिलकुल व्यर्थ हो जाती है।

चाहे बसो पहाड़ पर
या फूलों के गाँव
माँ के आँचल से अधिक,
शीतल कहीं न छाँव
इसमें ख़ुद भगवान ने
खेले खेल विचित्र
माँ की गोदी से अधिक,
नीरज कौन पवित्र

- नीरज

जहाँ माँ है वहाँ सारी ममता, मृदुलता, मानवता एवं महानता है। शायद इसीलिए दुनिया की लगभग हर भाषा में 'माँ' शब्द 'म' से शुरू होता है। जैसे - हिन्दी में माँ, अंग्रेजी में मदर, उर्दू में मादर, रशियन में मात्सता, संस्कृत में मातृ कहते हैं। भाषा विज्ञानी इस शब्द की उत्पत्ति अलग-अलग ढंग से बताते हैं। संस्कृत में इस शब्द के जन्म के पीछे निर्माण सूचक 'मा' धातु मानी जाती है। याने जो निर्माण करे वह 'माँ'। कुछ विद्वान इसे 'मान्' धातु से निकला शब्द बताते हैं अर्थात् जिसकी पूजा व मान-सम्मान किया जाता है।

अंग्रेज़ी भाषा की एक एजेंसी ने 402 देशों में एक सर्वेक्षण कराया। सारे सर्वेक्षण के बाद जो नतीजे आये उसमें सर्वाधिक लोगों ने मदर शब्द को अंग्रेजी भाषा के सबसे प्रिय शब्द के रूप में पसंद किया।

माँ तो एक नश्वर शरीर में छलकती आत्मा का समंदर है। इस समंदर के सारे तोहफ़े, सारे सीप और पानी में से सारा लवण निकालकर शेष रह जाता है बस मीठा पानी जो फैल जाता है सारे परिवार में। माँ अपने लिये बचा कर रख लेती है सारा खारापन। जितनी बार भी सुना हर बार विचार दृढ़ होता गया कि भगवान का मन था कि हर घर में जाकर मैं स्वयंर हूँ, कदाचित् यह संभव नहीं था इसीलिये उसने माँ का रूप धारण किया।

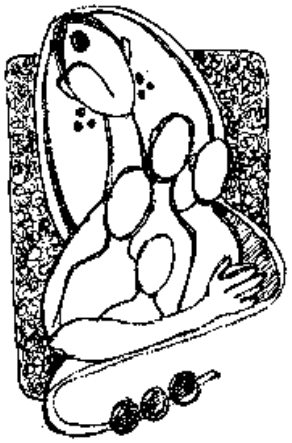

मामा से गुहार

चंदा मामा, माँ कैसी है,
क्या आती है हमारी याद उसको,
पास तुम्हारे गए हुए,
बीत गए हैं बरसों।
माँ बिना जीना ऐसे,
सूरज हो ताप बिना जैसे,
हो फूल बिना सुगंध का,
प्राण बिना हो तन जैसे।
मौसम कितने बीत गए,
पर माँ को याद ना आई,
राह देख थक गई अखियाँ

माँ क्यू लौट न पाई ?
मामा, माँ को बतलाना
पड़ौस में नई बहू आई है,
अपनी श्यामा गइया ने,
फ़िर बछिया ब्याई है।
माँ के बिछोह में,
तुलसी सूख गई है,
शायद छोटी बहना,
पानी देना भूल गई है।
समय से पहले बूढ़े होते,
पिता को न देखा जाता,
घंटो ख़ुद से बातें करते,
पर मैं कुछ न कह पाता।
नील गगन में तुम रहते हो,
और धरा पर मैं।
कैसे मिलना हो हमारा,
सोचा करता हूँ मैं।
मैं अबोध बालक हूँ मामा
चाह कर भी न आ पाऊँगा,
जल्द भेज दो माँ को मेरी,
बिना उसके जी न पाऊँगा।

प्रभात दुबे

क्यों मनता है मदर्स डे

मदर्स डे पूरी दुनिया में मनाया जाता है, लेकिन सभी जगह इसकी तारीख़ और दिन अलग-अलग है। अमेरिका में मदर्स डे का आयोजन मई के दूसरे रविवार को किया जाता है और कई दूसरे देश भी जैसे डेनमार्क, फ़िनलैंड, इटली, टर्की, आस्ट्रेलिया और बेल्जियम भी ठीक इसी दिन मदर्स डे के रुप मे मनाते है। अर्जेंटीना में अक्टूबर के दूसरे रविवार को माँ के दिन के रुप में मान्यता प्रदान की जाती है।

11 मई को पूरी दुनिया में अंतर्राष्ट्रीय मदर्स डे के रुप में मनाया जाता है। इस उत्सव को प्राचीन ग्रीस से जोड़कर देखा जाता है। ग्रीक दंतकथाओं में देवी रिया

का उल्लेख देवताओं की माँ के रुप में किया जाता था। उन्हीं के सम्मान में एक उत्सव का आयोजन किया जाता था। इसे मदर्स डे का पुरातन स्वरुप माना जा सकता है। इस दिन ग्रीक लोग अच्छे पकवानों के साथ अच्छे पेय देवी रिया को समर्पित करते थे।

1907 के दौरान फ़िलाडेल्फ़िया की एक स्कूल टीचर एन एम जारविस ने मदर्स डे को राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता दिलाने का प्रयास शुरु किया। वे इस काम को अपनी माँ एन मेरी रिव्ज़ जारविस के प्रति आदरांजलि मानती थीं। उन्होंने सरकार को सैकड़ों पत्र लिखे। साथ ही उन्होने राष्ट्र के सभी बड़े और प्रतिष्ठित लोगो को भी ख़त लिखे ताकि वे अपनी माता को सम्मान देने के लिए सरकार पर मदर्स डे घोषित करने का दबाव डाल सकें। 1914 में एना कि मेहनत रंग लाई और राष्ट्रपति वुडरो विल्सन ने मई के दूसरे रविवार को मदर्स डे के रुप में मनाने की घोषणा कर दी। तब से अब तक यह परंपरा बराबर क़ायम है। एना उस दिन चर्च गई। उसके हाथों में उसकी माँ के पसंदीदा सुर्ख़ लाल गुलाब थे।

> *बच्चा और माँ*
> *कभी अलग नहीं हो सकते।*
> *उनकी धड़कने एक-दूसरे*
> *के दिलों में होती है।*

बोली चिड़िया

घोंसले में आई चिड़ियां से पूछा चूज़ों ने
मां! आकाश कितना बड़ा है
चूज़ों को पंखों के नीचे समेटती
बोली चिड़िया
सो जाओ
इन पंखों से छोटा है।

श्री रामकुमार तिवारी

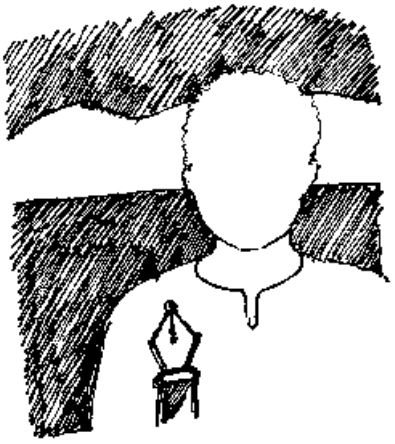

बेचैनी

सुप्रसिद्ध लेखक जावेद अख्तर पिछले दिनों किशोर कुमार सम्मान ग्रहण करने खण्डवा आए थे। एक लाख रूपये का यह सम्मान प्रतिवर्ष म.प्र. शासन की ओर से दिया जाता है। उनका क़द उस समय और ऊँचा हो गया जब उन्होंने इस सम्मान की राशि खण्डवा में किशोर कुमार की स्मृति में बनाए जाने वाले स्मारक के लिए दान में दे दी।

अपनी माँ का ज़िक्र आने पर वे कहते हैं कि- आज यूँ तो ज़िंदगी मुझ पर हर तरह से मेहरबान है, मगर बचपन का एक दिन 18 जनवरी 1953 अब भी याद आता है। जगह-लखनऊ में नाना का घर, रोती हुई

मेरी ख़ाला मेरे छोटे भाई सलमान को, जिसकी उम्र साढ़े छह बरस है और मुझे हाथ पकड़ कर घर के उस कमरे में ले जाती है, जहाँ फ़र्श पर बहुत-सी औरतें बैठी हैं, तख़्त पर सफ़ेद केफ़िन में लिपटी मेरी माँ का चेहरा खुला है, सिरहाने बैठी मेरी बूढ़ी नानी, थकी-थकी सी, हौले-हौले रो रही है, दो औरतें उन्हें सम्भाल रही हैं। मेरी ख़ाला हम दोनों बच्चों को उस तख़्त के पास ले जाती है और कहती है, अपनी माँ को आख़िरी बार देख लो। मैं कल ही आठ बरस का हुआ था। समझदार हूँ, जानता हूँ, मौत क्या होती है। मैं अपनी माँ के चेहरे को बहुत ग़ौर से देखता हूँ, कि अच्छी तरह याद हो जाए। मेरी ख़ाला कह रही है, इनसे वादा करो कि तुम ज़िंदगी में कुछ न कुछ बनोगे, इनसे वादा करो कि तुम जिंदगी में कुछ न कुछ करोगे। मैं कुछ कह नहीं पाता। देखता रहता हूँ और फिर कोई औरत मेरी माँ के चेहरे को क़फ़न से ढाँक देती है। ऐसा तो नहीं है कि मैंने ज़िंदगी में कुछ किया नहीं है, लेकिन फिर भी यह ख़्याल आता है कि मैं जितना कर सकता हूँ, उसका एक चौथाई भी अब तक नहीं किया और इस ख़्याल की दी हुई बैचेनी जाती नहीं...

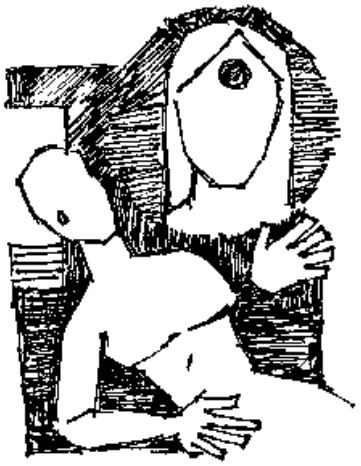

आँसुओं को पोंछने
ख़्वाबों में आ जाती है

मौत की आग़ोश में जब, थक के सो जाती है माँ,
तब कहीं जाकर, थोड़ा सुकून पाती है माँ।

फिक्र में बच्चों की, कुछ इस तरह घुल जाती है माँ,
नौजवाँ होते हुए भी, बूढ़ी नज़र आती है माँ।

रूह के रिश्तों की, यह गहराईयाँ तो देखिये,
चोट लगती है हमें, और चिल्लाती है माँ।

कब ज़रूरत हो मेरे बच्चों को, इतना सोचकर,
जागती रहती हैं आँखें, और सो जाती है माँ।

पहले बच्चों को खिलाती है, सुकून और चैन से,
बाद में जो कुछ बचा, शौक़ से खाती है माँ।

एक-एक हमले से, बच्चों को बचाने के लिये,
ढाल बनती है, कभी तलवार बन जाती है माँ।

ज़िन्दगानी के सफ़र में, गर्दिशों की धूप में,
जब कोई साया नहीं मिलता, तो याद आती है माँ।

जब परेशानी में घिर जाते हैं, हम परदेस में,
आँसुओं को पोंछने, ख़्वाबों में आ जाती है माँ।

देर हो जाती है घर आने में, अक्सर जब हमें,
रेत पर मछली हो जैसे, ऐसे घबराती है माँ।

मरते दम बच्चे ना आ पाएँ, परदेस से,
अपनी दोनों पुतलियाँ, चौखट पे रख जाती है माँ।

बाद मर जाने के फिर, बेटे की ख़िदमत के लिए,
भेष बेटी का बदलकर, घर में आ जाती है माँ।

शुक्रिया कभी हो ही नहीं सकता, उसका अदा,
मरते-मरते भी दुआ, जीने की दे जाती है माँ।

अज्ञात, साभार : ए.डी.जे.टाइम्स

कुछ भी नहीं बचता, खोने के लिए
माँ को खो देने के बाद

- नरेन्द्र जैन

एक दिन एक टायर कंपनी का अधिकारी मुझे बताने लगा मुझे बचपन से हर जन्मदिन पर कोई फूलों का एक गुलदस्ता भेजा करता था। पहले तो मैंने काफी खोजबीन कर पता लगाना चाहा पर मुझे गुलदस्ते में इतनी खुशी मिलती थी कि मैंने खोजने की ज़हमत उठाना बंद कर दी। मैंने माँ से पूछा, माँ बोली हो सकता है वो तुम्हारे तिवारी सर हों जिनकी दवाई तुम हमेशा लाकर देते हो या फिर पड़ोस के किराना दुकान वाले कन्हैया सेठ हों जिन्हे तुम ठंडा पानी पिलाते हो।

मैं जब बड़ा हुआ तो और नये विचार मन में आने लगे कि हो सकता है कोई साथ पढ़ने वाली लड़की हो जो मुझ पर मरती हो। मैं और माँ उन सारे संभावित नामों पर विचार करते रहते थे। बाद की व्यस्तता ने इस विषय पर विचार करना बंद कर दिया। ज़िंदगी में मोड़ आते रहे, पढाई ख़त्म हुई, नौकरी लग गयी, तबादले होते गये, देश भर में भटकता रहा, पर वह फूलों का गुलदस्ता निर्विघ्न रूप से प्रतिवर्ष आता रहा।

इसी बीच अचानक एक दिन माँ नहीं रही...।

अगले जन्मदिन पर गुलदस्ता भी नहीं आया।

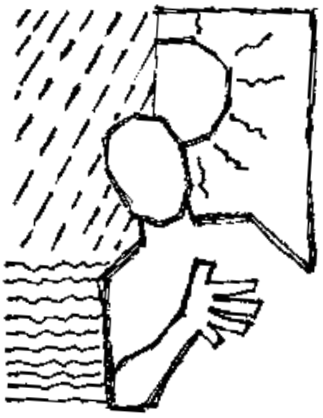

नसीहतों वाली

धूप में बाहर मत घूमो
लू लग जाएगी।
बारिश में
भीग गये
कपड़े बदलो,
तबियत बिगड़ जाएगी।
इस बार
कितनी कड़ाके की ठंड है
और तुम हो कि
मानते नहीं,
चलो स्वेटर पहनो
सर्दी लग जाएगी।

ग़ुस्सा आता था माँ पर
बचपन में
ऐसी बातें सुनकर।
मेरे सुख-दु:ख से
सरोकार था किसी को
यह अहसास होता है
माँ के नहीं होने पर।

मुनिश्री क्षमासागर

“माँ तेरी याद आई तो आती चली गई
बदली सी तेरे चाँद पे छाती चली गई”

- शाहिद अख़्तर, बुरहानपुर

जो लोग जीवन में बाप बड़ा न भैया सबसे बड़ा रूपैया को अपने जीवन का ब्रह्म वाक्य मानते हैं उन्हें एक बात अच्छी तरह से समझ लेना चाहिये कि अगर जीवन में पैसा ही सब कुछ होता तो आज हमारे देश में सिर्फ़ एक ही देवता की पूजा होती, धन की देवी लक्ष्मी की।

जीवन में प्रेम के भी मायने हैं इसलिये राम और कृष्ण भी पूजे जाते हैं। ज्ञान की भी अपनी महत्ता है इसलिये सरस्वती की वंदना भी होती है। शक्ति के बिना जगत अधूरा है इसलिये माँ भवानी की उपासना भी होती है। शांति और अहिंसा का महत्व बताने वाले बुद्ध और महावीर भी पूजे जाते हैं। सेवा और त्याग के लिये ईसा, सत्य पर अटल रहने के लिये मूसा, अन्याय का प्रतिकार करने वाले गुरू गोविन्द सिंह तो माँ-बाप की सेवा करने वाला भक्त श्रवण कुमार भी पूजा जाता है।

ये सारी पूजा, अर्चना, उपासना यह बतलाती है कि जीवन में पैसा बहुत कुछ तो है पर सब कुछ नहीं, पैसा सुख तो दे सकता है पर दु:ख कम नहीं कर सकता अत: चाहे कुछ भी हो जाए जिस पलड़े में धन-दौलत तुलती हो वहाँ माँ को कभी तौला नहीं जा सकता। याद रहें... ज़िंदगी में रिश्तें होना बेहद ज़रुरी है पर उससे भी ज़्यादा ज़रुरी है रिश्तों में ज़िंदगी का होना।

अम्मा की डाँट

बचपन
बहुत दिन हुए नहीं देखा
दस का सिक्का
स्कूल के दरवाज़े पर खड़े होकर
शांताराम के चने नहीं खाए
बहुत दिन हुए आँगन के चूल्हे पर हाथ तापे
याद नहीं आख़री बार
कब हुए थे, आख़री बार
पेड़ की डाली पर
कब छोड़ा था चांद का पीछा करना
याद नहीं कब कह दिया
सुनहरी पन्नी वाली चॉकलेट को अलविदा

याद नहीं कब छूट गए
काँच की चूड़ियों के टुकड़े
माचिस की ख़ाली डिबिया
चिकने पत्थरों की जागीर
कब सुना था आख़री बार
स्कूल की घंटी का मीठा सुर
बहुत दिन हुए नहीं खाई
अम्मा की डाँट
बस्ता पटक के भाग गया था
खेलने
नहीं लौटा है अब तक
शाम ढलने को है।

सुधीर शर्मा

ता उम्र बस इसी का रहेगा मुझे मलाल
अच्छे जो दिन हैंआए तो माँ ही चली गई

- सुफ़यान क़ाज़ी, खण्डवा

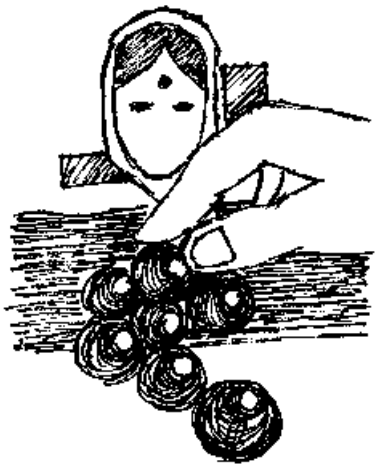

दृष्टि और अंतर्दृष्टि

समूचा गाँव उस अंधी वृद्धा स्त्री से सहानुभूति रखता था जो समुद्र से लगे हुए घर में रहती थी और जिसने अपनी उस बिटिया को खो दिया था जो समुद्री मोतियों की गोतख़ोर थी। उसका अब कोई भी सहारा शेष नहीं था।

एक दिन वह वृद्धा एक व्यापारी के पास गयी, उसने एक अत्यंत चमकीली पुड़िया दिखाते हुए व्यापारी से कहा...मोती, ये दुर्लभ हैं और इन्हें मेरी बेटी ने अब तक किसी को नहीं बेचा था, इनकी क़ीमत से ही मेरी शेष ज़िंदगी का गुज़ारा होगा। व्यापारी ने आश्चर्य से पूछा.. तुम यह कैसे जानती हो कि ये मोती दुर्लभ हैं,

तुम तो देख पाने में भी असमर्थ हो। वृद्धा ने कहा.. मेरे पास स्पर्श करने के लिये मेरी अंगुलियाँ हैं, मैंने इन्हें छुआ है और इनका आकार मैं महसूस कर सकती हूँ, मैं अनुमान लगा सकती हूँ कि क्यों ये मोती विशिष्ट हैं!

व्यापारी ने उस पुड़िया को खोला और लंबी गहरी सांस लेते हुए वृद्धा से पूछा...आपकी बेटी ने इन्हें संभाल कर क्यों रखा ? वृद्धा ने सहज भाव से उत्तर दिया...मैं नहीं जानती। व्यापारी ने उदारता से कहा... तुम्हारी उंगलियों ने इन मोतियों को छुआ है और उसका आकार जाना है, लेकिन उनका रंग नहीं पहचाना है, ये अत्यंत दुर्लभ काले मोती हैंजो सचमुच में अनमोल हैं, मैं इनकी वास्तविक क़ीमत तुम्हें अवश्य दूँगा।

वृद्धा को उम्मीद से कई गुना पैसे मिल गये । वह ख़ुशी-ख़ुशी व्यापारी को दुआएँ देती हुए चली गयी।

इस दृश्य को अन्य लोग भी देख रहे थे । व्यापारी की इस ईमानदार छवि पर उपहास करते हुए उनमें से एक ने पूछा...तुमने उससे मोतियों के रंग के विषय में यह सब क्यों कहा, वह तो अंधी थी।

व्यापारी ने कहा...हाँ, मैं जानता था कि वह अंधी है, संयोगवश मेरी माँ भी अंधी थी और मुझे पता है कि माँ की अंतर्दृष्टि, उसकी संवेदनशीलता, कोरी आँखों की रोशनी से श्रेष्ठ है, इसीलिये तो मैंने उससे यह कहा।

माँ की दृष्टि और अंतदृष्टि भी बड़ी प्रखर होती है। जिसने उसके इस गुण को समझ लिया वह कभी उसकी अनदेखी नहीं कर सकता ।

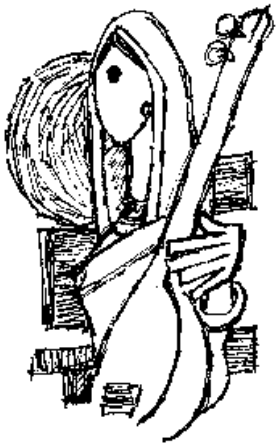

मीरा की पीर

माँ चंदा की चांदनी, माँ सूरज की धूप
वक़्त पड़े ज्वालामुखी, वक़्त पड़े जलकूप
दरिया, माँ की नम्रता, इसमें इतना प्यार
जीवन भर टूटे नहीं जिसकी अविरल धार
माँ मीरा की पीर है, माँ कबीर का सत्य
माँ अमीर की शायरी, तुलसी का लालित्य
माँ में गीता सार है, माँ में वेद पुराण
माँ में पावन बाईबिल, माँ में रचा है क़ुरआन
माँ सीता का त्याग है, माँ राधा का प्यार
माँ है पर्वत सी अडिग, माँ गंगा की धार
माँ वीणा का तार है, माँ मुरली की तान
बिन माँ के जीवन लगे, नीरस बेपहचान

✍ अज्ञात

सहिष्णुता माँ का अनमोल गुण है जो उसमें कूट-कूट कर भरा होता है। पिता को भी सहिष्णुता हमेशा माँ ही सिखाती है। ज़रा सी बात पर उबल पड़ने वाले बेटे-बेटी को भी अक्सर माँ ही बताती है कि उसे सहिष्णुता से काम लेना चाहिये। जिसने इस पर अमल कर लिया उस पर इसका प्रभाव भी स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगता है। जब भी कहीं हमने आपा खोया तो माँ ही है जो हमारे मुँह पर हाथ रख देती है।

मानव निश्चित रूप से भाग्यशाली हैं कि माँ के रूप में सद्‌गुणों की एक सरिता सदैव हमारे साथ बहती रहती है। कुछ इंसान ऐसे होते है जो भोगते कम है और भुगतते ज़्यादा है फिर भी ज़िंदगी की चाहत से ऐसे लबरेज़ रहते हैं कि भुगता हुआ भी भोगा नज़र आता है। माँ इस बात का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है।

आज हाथ मिलाने वाले तो बहुत मिल जाते है पर होले से कंधे पर हाथ रखने वाला कोइ नही है। माँ, तो कंधे पर भी नहीं सर पर रखा हुआ हाथ है...

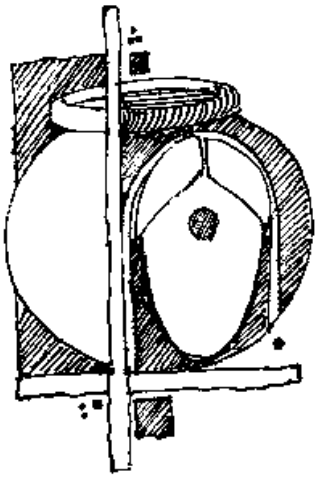

मटका

माँ यह तेरी याद आती है पेपरों के दिनों में।
तेरे पकाए, तिकोने मीठे पराठे
सवा ग्यारह बजे के क़रीब,
आधी छुट्टी के वक़्त
नमकीन रोटी की पुंगी बनाकर देना।

सब अक्सर बहुत याद आता है,
यहाँ आधी छुट्टी नहीं होती।
दूध उबालना तो दूर यहाँ तो मेस वालों को
चाय में चीनी भी नहीं डालनी आती,

तेरा मुझे मेले में,
चाबी वाली खिलौना जीप लेकर देना,
सब बहुत याद आता है।

तक़रीबन हर रोज़ ही स्कूल की वर्दी वाली
काली पतलून और सफ़ेद कमीज़
तू ही तो ढूँढ कर देती थी।

अब मैं कपड़े हैंगर में टाँगता हूँ।
माँ ! ज़िंदगी जितनी बढ़ती गई है,
चीज़ें भी उतनी ही बढ़ गई हैं और
ज़िंदगी हैंगर में टाँगनी पड़ रही है।
सच में माँ! यहाँ तेरी बहुत याद आती है।

“पेड़ की परिक्रमा करते
कभी नहीं थके माँ के पाँव
माँ नहीं समझ सकी कभी
जब माँग रही होती है वह दुआ
हम थक चुके होते हैं जीवन से”

- नीलेश रघुवंशी

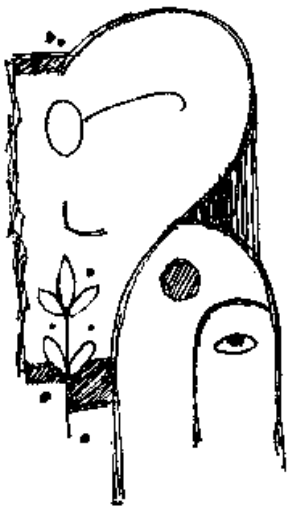

चट्टान

महात्मा गाँधी हमेशा कहते थे... अगर ताक़त के मायने हैं पाशविक ताक़त तो वाक़ई नारी में यह कम है और अगर इसके मायने नैतिक ताक़त से हैं तो नि:संदेह मर्द से कई गुना आगे है औरत।

अनुकूल परिस्थिति में तो आदमी हवा में उड़ने लगता है लेकिन समय ज़रा भी प्रतिकूल हुआ तो वह शुतुरमुर्ग की तरह रेत में अपनी गर्दन छिपा लेता है। इससे बिल्कुल उलट स्त्री सामान्य परिस्थिति में तो कमज़ोर नज़र आती है पर हवा जब भी उल्टी बहे तो वह हो जाती है चट्टान की तरह अडिग।

जब राम जी को वनवास मिला तो सीता जी ने निवेदन

किया कि स्वामी मैं भी आपके साथ चलूँगी। राम जी ने मना किया तुम कोमलांगी हो, दो राजकुलों में रही हो, सदा सुख, संपत्ति, वैभव को भोगा है। हमेशा आनंद के पीछे चली हो वन की कँटीली डगर पर तुमसे न चला जायेगा। सीताजी ने प्रतिकार किया और कहा, क्षमा करें स्वामी, मैं भारतीय नारी हूँ। सुख सृमद्धि के दौर में तो सदा आपके पीछे चली इसमें कोई दिक़्कत भी नहीं थी। लेकिन आज जब कँटीली पगडंडी पर चलने की बारी आई है तो मैं सदैव आपके आगे चलूँगी। उन काँटों को कुचलते हुए जो आपकी राह में आने वाले हैं। सती सावित्री हो, तारामती हो या फिर द्रोपदी, ईश्वर को झुकाने का साहस तो सात्विक स्त्री में ही है।

माँ सदा अपने साथ दो परिवारों की चिंता लेकर चलती है, ससुराल में पीहर की चिंता एवं पीहर में ससुराल की। परिवार में उसकी क़द्र तब होती है जब वह कुछ समय के लिये बाहर जाती है। उस समर्पण में देखिये कि वह अपने पीहर लौटते समय भी अपने घर की पूरी व्यवस्था जमाने में लगती रहती है। आख़िर क्षणों तक लगी रहती है।

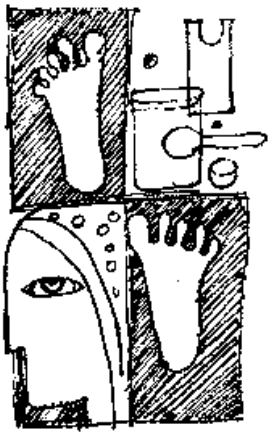

बंटी की मम्मी 'मायके' जा रही हैं

बीमार हैं
बंटी की मम्मी के पिता
ज़रूरी है जाना
जाना ज़रूरी है
क्योंकि बीमार हैं पिता
और बहनें भी आ रही हैं
पिता से मिलने
बंटी के पापा नहीं जा रहे साथ
काम बहुत है दफ़्तर में
इतना काम है कि
याद आ रहे हैं उन्हें
अपने पिता

अकेली ही जा रही है बंटी की मम्मी
सूचनाओं और हिदायतों की सूची जारी करती हुई

टेस्ट है बंटी का शनिवार को
प्रश्नावली सात के सवाल समझाना है उसे

सूख रहा है बनियान बाथरूम में
आने हैं धोबी के यहाँ से आठ कपड़े प्रेस होकर

रखना पड़ेंगे दरवाज़े खुले हुए
नहीं तो निकल जाएगी महरी चुपचाप

लॉकर की चाबी
छुपा दी है पुस्तकों के पीछे

निकाल दिये हैं कंकर चावल में से
आटे के कनस्तर के पास रखा है दाल का डिब्बा।

समय पर खानी है
ब्लड प्रेशर की दवाई

सचेत करती हुई बंटी के पिता को
मायके जा रही है बंटी की मम्मी
अपने पिता से मिलने

सचमुच जा रही है
क्या मायके ?

ब्रजेश कानूनगो

एक बार का क़िस्सा है, एक लाचार सी दिखने वाली स्त्री जो कपड़ों से अच्छे घर की मालूम हो रही थी, मेरे घर पर आयी और प्रलाप करने लगी। मेरी मम्मी जो इन लोगों की बातों में कम आती है, उसकी बात बड़े ध्यान से सुन रही थी।

वह बता रही थी कि उसका बच्चा अस्पताल में मरणासन्न हालत में भर्ती है और उसकी दवाई के लिए दो सौ रूपये चाहिये। मेरे लाख विरोध पर भी मम्मी ने उसे रूपये दे दिये। मैं ठहरा ज़्यादा होशियार मैंने उस महिला का पीछा किया और पाया कि बस-स्टैण्ड पर उसका लड़का तंदुरूस्त खड़ा अपनी माँ का इंतज़ार कर रहा है।

मैं उल्टे पैर वापस घर आया, मैंने आते ही मम्मी पर अपनी नाराज़गी ज़ाहिर की और बताया कि वह तो भला चंगा है, उसने आपको ठग लिया।

मम्मी ने तटस्थ भाव से उत्तर दिया कि, मैंने भी तो दो सौ रूपये इसी दुआ के साथ दिये थे कि उसका बेटा भला चंगा हो जाए।

...एक अच्छा दिल दुनिया के तमाम दिमाग़ों से बेहतर है। यवतमाल के दरड़ा परिवार ने अपनी माँ के अमृत महोत्सव पर एक बहुत ही अच्छी पुस्तक वितरित की है ''तापसी'' जिसमें माँ की इसी ऊँची सोच पर एक सुंदर कविता है -

हमारी माँ है

आँगन की तुलसी, महातरू वट सी
अन्नदा अमृत के अक्षय घट सी
हमारी माँ है।
जिनका स्पर्श तथागत की वाणी
जिनकी दृष्टि मंगला कल्याणी
हमारी माँ है।
चन्द्र किरण सी निश्छल निर्मल
पुरवाई सी स्नेह सरल
हमारी माँ है।
सृजन यज्ञ की अविरत ज्वाला
दिव्य माणिक-शान्ता शिवाला
हमारी माँ है।
मन दर्पण में विधि की देखी जो छवि
कहें जिसे अचला, वसुधा या पृथ्वी
हमारी माँ है।

उपहार

उपहार को क़ीमत से तौलना संसार की रीत है,लेकिन माँ के प्यार की रीत ही निराली है,क्या होगा माँ के लिए बेहतरीन तोहफ़ा? इस बात को मीरा जैन ने अपनी एक लघुकथा में सरलता से समझा दिया है

नए वर्ष के उपलक्ष्य में अमेरिका से जतिन द्वारा भेजे गए उपहारों को देख सभी अत्यंत प्रसन्न हुए। उर्मिला ने जैसे ही अपने नाम वाला छोटा-सा पैकेट खोला, उसकी ख़ुशी का ठिकाना ही न रहा।

लिली जो अपना तोहफ़ा देख अब तक बेहद ख़ुश थी, अब सासू माँ को ख़ुशी से पागल हुआ देख मन

ही मन जल-भुन गई- लगता है देवर जी ने अपनी माँ के लिए कोई बेहद क़ीमती चीज़ भेजी है, तभी तो ख़ुशी के मारे पैर ज़मीन में ही नहीं टिक रहे हैं। यूँ तो फोन पर मुझसे बड़ी-बड़ी घी चुपड़ी बातें करेगा कि भाभी आप भी मेरी माँ जैसी हैं और अब भेदभाव।

छि: कैसी ओछी मानसिकता है जतिन की। जाकर देखूँ तो सही, आख़िर भेजा क्या है उस लाड़ले ने अपनी माँ के लिए।

मन की अधीरता एवं व्यथा को छुपाते हुए सासू माँ के क़रीब पहुँच उत्साहित हो कहने लगी- लगता है मम्मी जी जतिन ने आपके लिए कोई अनमोल ख़ज़ाना भेजा है।

उर्मिला वह छोटा सा डिब्बा लिली के हाथों में रख बोली- लो ख़ुद ही देख लो।

लिली ने बिना एक पल भी गँवाए उस डिब्बे को खोला, उसके अंदर मात्र एक क़ाग़ज़ का पुर्ज़ा चिपका हुआ था। उस पर लिखा था- मेरी प्यारी माँ! मैं अगले महीने घर आ रहा हूँ।

एक बच्चा अपनी माँ के लिये तोहफ़े में
हीरे-मोती लाए या काँच की गोली।
माँ कभी तोहफ़े को नहीं देखती।
वो तो ख़ुश है कि बच्चे ने उसके बारे में सोचा।
उसके लिये उपहार नहीं प्यार महत्वपूर्ण है।

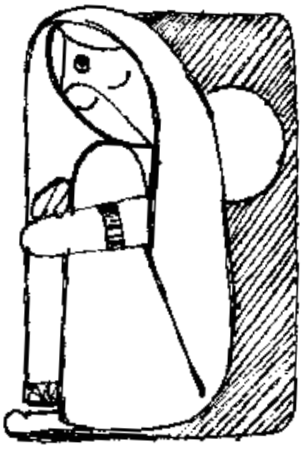

थकी हारी

माँ, तुम्हारी हँसुली
जिसे रख आए थे पिता
बनिये की दुकान
उग रही है
दूर आसमान पर
इन्द्रधनुष की तरह!
माँ, तुम्हारा छागल
जिसे छीन ले गया था
भट्टी का मालिक
रात के चढ़ते पहर में
झन-झन बज रहा है

कीट-पतंगों के संग
पीठ पर पहाड़ ढोती माँ
माँ, तुम्हारी ख़ुशी
खिलने से पहले ही
जिसे मार गया था पाला
खिल रही है
आसमान में चाँद बन
हमारे लिए-हम सबके लिए
जीती माँ
माँ, तुम्हारा आँचल
जो बिछ गया था
पटवारी के पाँव पर
फैली है आसमान में
चाँदनी रात की तरह
थकी हारी माँ...!

बद्रीनारायण

दिन भर की मशक़्क़त से
बदन चूर है लेकिन
माँ ने मुझे देखा तो
थकान भूल गई है

- मुनव्वर राना

एक लड़की जब शादी करके अपने ससुराल आती है तो आँखों में ढेर सारे सपने, उमंगें होती हैं। कॉलेज के दिनों में सहेलियों के साथ बैठकर देखे गये दिन के वे सपने शनै: शनै: काफ़ूर होने लगते हैं। घर गृहस्थी के झमेले, रोज़मर्रा के काम काज, दिन भर की थकान, पति का इंतज़ार ..आदि इन सबके साथ दौड़ती हुई ज़िंदगी की रेल सारे सपनों के छोटे-छोटे स्टेशनों को छोड़कर आगे निकलती जाती है। और फिर अचानक एक दिन उसे प्राप्त होता है मातृत्व। उसे भान कराया जाता है कि तेरा नारीत्व अब सफल हो गया। फिर धीरे-धीरे ज़िंदगी की रेल की गति दुगुनी हो जाती है। रेल बदल जाती है सुपर फास्ट एक्सप्रेस में, अब तो ख़ुशियों के बड़े स्टेशन भी छूटने लगते हैं। इस पीड़ा और तकलीफ़ को भी वह हँसते हुए झेलती जाती है और सिर्फ एक माँ शब्द की पुकार उसकी सारी थकान, सारी उदासी मिटा देती है। अब उसके सपने अपने न रहकर बच्चों के सपने हो जाते हैं। सपनों की आँखे बदल जाती हैं। स्कूल और कॉलेज की चंचल लड़की न जाने कहाँ खो जाती है, इसे उर्दू के सुप्रसिद्ध शायर निदा फाज़ली इस तरह बयान करते हैं.....

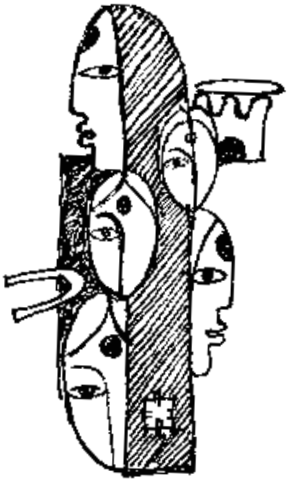

फटे-पुराने इक एलबम में...

बेसन की सोंधी रोटी पर, खट्टी चटनी जैसी माँ,
याद आती है चौका, चिमटा, फुँकनी जैसी माँ।

बान की खुरी खाट के ऊपर, हर आहट पर कान धरे,
आधी सोई, आधी जागी, थकी दुपहरी जैसी माँ।

चिड़िया की चहकार में गूंजे, राधा-मोहन, अली-अली,
मुर्ग़े की आवाज़ पे खुलती, घर की कुंडी जैसी माँ।

बीवी, बेटी, बहन, पड़ोसन थोड़ी-थोड़ी सी सब में,
दिन भर इक रस्सी के ऊपर चलती नटनी जैसी माँ।

बाँट के अपना चेहरा, माथा, आँखें, जाने कहाँ गई,
फटे पुराने इक एलबम में चंचल लड़की जैसी माँ।

निदा फाज़ली

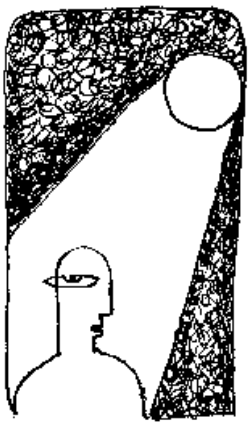

जीवन के कमरे का दरीचादान

खंडवा की माटी में जन्में सुप्रसिद्ध स्तंभकार श्री विनय उपाध्याय वर्तमान में भोपाल में कला साधना कर रहे हैं, वे लिखते हैं -

माँ के बारे में सोचते, याद करते आज भी मुद्दत गुज़र जाती हैं। कितनी छवियाँ, कितने अहसास। वक़्त के साँचे में कितना कुछ बनता सँवरता रहा है। मगर जब भी माँ के अहसासों को शब्दों में बाँधने के लिये क़लम उठाई, मेरी अभिव्यक्ति हार मानती रही। कभी काग़ज़ पर भावनाओं को उतारने का जतन किया भी तो लगा जैसे-जैसे समुन्दर को एक बूँद की मानिंद नाप रहा हूँ। कितनी माँए, कितनी औलादें... सारी

क़ायनात ही माँ के साये में जी रही हैं। एक ऐसा रूहानी रिश्ता जिसकी धड़कनों को ख़ाक होने तक सिर्फ़ महसूस किया जा सकता है। मुझे यह सब लिखते हुए अचानक कभी पढ़ा हुआ एक टुकड़ा याद आ रहा है- 'हर माँ की क़िस्मत में भले ही ना हो अच्छी औलादें, पर हर बच्चे की क़िस्मत में ज़रूर होती हैं एक अच्छी माँ।' मैंने निजी तौर पर यह अनुभव किया है कि सैकड़ों मील दूर बसी माँ को मैंने आँसू और मुस्कुराहटों के बीच जब-जब भी याद किया जीवन के कमरे में रौशनदान की तरह माँ ने उजियारा बिखेरा। अदृश्य होकर भी एक शब्द अमृत की तासीर कैसे बन जाता है, माँ से बेहतर दूसरा शायद कोई विकल्प नहीं।

उदास होकर ही सही
माँ ने
अब नई सभ्यता को अपना लिया है
तीज त्यौहारों पर
पुरानी कहानी सुनाती
देर रात तक
लोक गीतों को सुर देती माँ
अब अधिक चुप रहने लगी है।
घर के आले में
भगवान को दीप दिखाती

चौपाई-दोहे गाती
बच्चों को संस्कार देती माँ
अब बहू बच्चों के साथ
टी.वी. चैनलों की चक धक में
हो जाती है गुम।
आँगन में
तुलसी सदा सुहाग की जगह
गमलों में उगे।
कैक्टस और मनीप्लांट को सींचती माँ
अब बीते सुनहरे दिन बिसराकर
ज़माने के साथ हँस ली है
माँ।

माँ तुम एक कविता हो,
जिसे मैं कभी नहीं लिख सकती।
उनकी धड़कने
एक-दूसरे के दिलों में होती है।

जीवन की रेल तेज़ी से चलती जाती है, बच्चे सयाने होने लगते हैं। रिश्तों के रूप बदलने लगते हैं। माँ की हालत उस हाथ जैसी होने लगती है जिससे उसकी अंगुलियाँ पूछती हैं कि ऐ हाथ बता तुझे कौन सी अंगुली सबसे ज़्यादा प्यारी है। सबकेलिये करने के बाद भी हमेशा हर बच्चे को यही लगता है कि माँ को तो दूसरा बच्चा ही ज़्यादा प्यारा है। इन सबके बीच कभी कभार पति का भी ताना आ ही जाता है, तुम तो बच्चों के चक्कर में मुझे भूल ही गयी हो। लेकिन माँ तो माँ है। उसे तो किसी से सर्टिफिकेट चाहिए ही नहीं वह तो इसके बाद भी दिन भर लगी रहती है। उस डोरी की तरह जिसने सारे परिवार के मोतियों को जोड़ कर रखा है। इस डोरी से ही माला है वरना सारे मोतियों को बिखरने में तो बस एक पल की देर है। टीवी चैनल आजतक में कार्यरत आलोक श्रीवास्तव एक सुपरिचित शायर हैं। जितनी सुंदर इनकी रचनाएँ हैं उतना ही अद्‌भुत है इनका सुलेख। इनके क़लम ने कम उम्र में बड़ी परिपक्वता वाली सौंधी कविताएँ रची हैं....

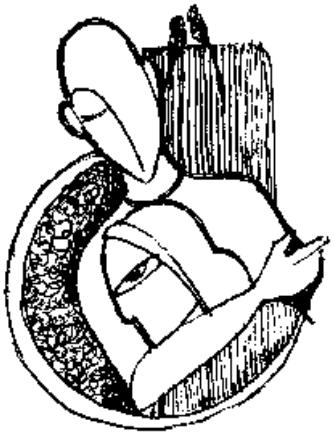

अम्मा

चिंतन, दर्शन, सृजन, जीवन, रूह, नज़र पर छाई-अम्मा
सारे घर का शोर-शराबा सूनापन तन्हाई-अम्मा।

उसने ख़ुद को खोकर हममें एक नया आकार लिया है
धरती, अंबर, आग, हवा, जल जैसी ही सच्चाई-अम्मा।

घर में झीने रिश्ते मैंने लाखों बार उधड़ते देखे
चुपके-चुपके कर देती है जाने कब तुरपाई-अम्मा।

सारे रिश्ते जेठ-दुपहरी, गर्म हवा, आतिश, अंगारे
झरना, दरिया, झील, समंदर, भीनी सी पुरवाई-अम्मा।

बाबूजी गुज़रे आपस में सब चीज़ें तक़्सीम हुईं
मैं घर में सबसे छोटा था, मेरे हिस्से आई अम्मा।

आलोक श्रीवास्तव

दुनिया में माँ का ही एक पद है जो कर्त्तव्य निर्वहन में सबसे आगे आ जाता है लेकिन जब भी उसका श्रेय लेने की बारी आती है वह सबसे पीछे हट जाता है।

श्रेय तो वे लेना चाहते हैं जिन्हें कर्त्तव्य निर्वहन में आनंद नहीं मिलता। वह तो अपने कर्त्तव्य कर चुपचाप निकल जाती है, इतनी देर भी नहीं रूकती कि कम से कम हम चेहरे से ही कृतज्ञता तो ज़ाहिर कर सकें। चूँकि वह श्रेय लेने का दावा नहीं करती इसलिये उसे श्रेय से वंचित भी नहीं किया जा सकता। वंचित तो उसे किया जा सकता है जो दावेदार हो। दावे का खंडन किया जा सकता है पर जिसने कोई दावा ही नहीं किया उसका खंडन कैसे होगा। प्रसिद्ध दार्शनिक लाओत्से कहते हैं... 'वह तो ऐसी जगह बैठी है जहाँ से नीचे गिरने की कोई जगह नहीं हैं, जीवन का सच्चा सिंहासन यही है।'

उज्जैन के सुप्रसिद्ध कवि श्री ओम व्यास 'ओम' को हर कवि सम्मेलन में यह कविता पढ़ते-पढ़ते गले में काँटे उग आते थे और श्रोताओं की आँखें इस कविता और आवाज़ का सम्मान करती हुई पनीली हो जाती थीं ....लेकिन कविता सुनाने से पहले वे स्वामीनाथ पांडे का तीन पक्तियों का एक उपन्यास ज़रूर सुनाते थे।

'एक विधवा माँ के दोनों बेटे अलग-अलग रहते थे, एक मकान के नीचे की मंजिल पर दूसरा ऊपर। व्यवस्था कुछ ऐसी थी कि महीने में पंद्रह दिन माँ, एक बेटे के यहाँ खाना खाती शेष पंद्रह दिन दूसरे बेटे के यहाँ। लेकिन साल के वे महीने जिनमें 31 दिन होते थे माँ को एक दिन का उपवास करना पड़ता था।' पंडित ओम कहते हैं कि नौ महीने बच्चे को पेट में रखने वाली माँ जब बच्चों को एक दिन के लिये भारी पड़ने लग जाए तब मैंने यह कविता लिखी ....

झुलसते दिनों में कोयल की बोली

माँ संवेदना है, भावना है, अहसास है,
माँ जीवन के फूलों में ख़ुश्बू का वास है,
माँ रोते हुए बच्चे का ख़ुशनुमा पलना है,
माँ मरूस्थल में नदी या मीठा झरना है,
माँ लोरी है, गीत है, प्यारी सी थाप है,
माँ पूजा की थाली है, मंत्रों का जाप है,
माँ झुलसते दिनों में कोयल की बोली है,
माँ मेहंदी है, कुमकुम है, सिंदूर है, रोली है,
माँ क़लम है, दवात है, स्याही है,
माँ परमात्मा की स्वयंएक गवाही है
माँ त्याग है, तपस्या है, सेवा है,

माँ फूँक से ठंडा किया हुआ कलेवा है,
माँ अनुष्ठान है, माँ साधना है, जीवन का हवन है,
माँ ज़िन्दगी के मोहल्ले में आत्मा का भवन है,
माँ चूड़ी वाले हाथों के मज़बूत कंधों का नाम है,
माँ काशी है, क़ाबा है, और चारों धाम है,
माँ चिंता है, याद है, हिचकी है,
माँ बच्चे की चोट पर सिसकी है,
माँ चूल्हा, धुआँ, रोटी और हाथों का छाला है,
माँ ज़िन्दगी की कड़ुवाहट में अमृत का प्याला है,
माँ पृथ्वी है, जगत है, धुरी है,
माँ बिना इस सृष्टि की कल्पना अधूरी है,
माँ की यह कथा अनादि है, अध्याय नहीं है,
माँ का जीवन में कोई पर्याय नहीं है,
तो माँ का महत्व दुनिया में कम हो नहीं सकता और
माँ जैसा दुनिया में कुछ हो नहीं सकता
मैं कविता की ये पक्तियाँ माँ के नाम करता हूँ
और दुनिया की सब माताओंको प्रणाम करता हूँ।

स्मृति शेष ओम व्यास ओम

बुझते हुए दीये पे हवा ने असर किया
माँ ने दुआएँ दीं तो दवा ने असर किया

- नवाज़ देवबंदी

सुनो! क्या कहती है वो ?

समय बदला है, लोगों का आर्थिक स्तर पहले से बेहतर हुआ है। परिवार में शिक्षा आई है। 'विद्या ददाति विनयम्' की तर्ज़ पर बच्चे अब माँ-पिता का ख़याल पहले से ज़्यादा रखने लगे हैं। परिवारों में सास-बहू में भी अब ज़्यादा अच्छे तालमेल हैं।

लेकिन इन सब अच्छाइयों के साथ ही साथ मनुष्य की व्यस्तता भी बढ़ गयी है। होता अब यह है कि वृद्धावस्था की ओर बढ़ रही माँ के पास फ़ुरसत के सिवा कुछ नहीं रहता और बेटों, बहुओं के पास माँ के लिये फ़ुरसत के अलावा सब कुछ रहता है। यहाँ यह भी महत्वपूर्ण है कि हम माँ के साथ कैसा समय बिताते हैं। यह महत्वपूर्ण नहीं है कि हम कितना समय बिताते हैं। हम उनके पास वक्ता बनकर कम रहें और श्रोता बन कर ज्यादा रहें तो बेहतर है।

हम अच्छा भले ही न कर पायें उनसे अच्छी बातें तो कर ही सकते हैं। बातचीत ही तो वह माध्यम है जो दुनिया बदल देता है... मोमबत्ती न बन पाये तो कोइ ग़म नहीं अगरबत्ती ही बन जाऐं वो भी कम ही सही पर घनघोर अंधेरे में रोशनी तो दे ही देती है ...

जीवन में याद रखियेगा, जब आप सही होते हैं तो कोई याद नही रखता है पर जब आप ग़लत हो जाते है तो पूरा परिवार और समाज याद रखता है -

जाने-अनजाने में हमसे उस देवी की अवमानना होने लगती है। उसकी नेक सलाह हमें टोक लगने लगती है। हृदय पर हमारा दिमाग़ हावी होने लगता है। हम माँ के लिये भौतिक साधन उपलब्ध करवाकर ही अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं। लेकिन अनेकों बार हमारी ऐसी ग़लतियाँ जो हमें तो छोटी लगती हैं पर माँ की आँखों में आँसू का कारण बन जाती हैं।

अगर हम जीवन में माँ को बेहतर सुविधा, भौतिक संसाधन न दे पाएँ तो चलेगा, उसे दो-चार साड़ी, गहने कम लाकर दे देंगे तो भी चलेगा, लेकिन हमारी बातें अगर कभी उसके जीवन में दु:ख का कारण बनें तो भगवान भी हमें कभी माफ़ नहीं करेगा। जब मैं किसी माँ को रोते हुए देखता हूँ तो समझता हूँ कि क़ायनात हिल रही है हम अभी भस्म हुए...

नीरा मेहता नईदुनिया में लिखती है - ''बात साफ़ है कि आज के कॅरियर की जद्दोजहद सफलता की तगड़ी क़ीमत वसूल कर रही है। सफलता मिले या ना मिले पर इसकी अंधी दौड़ के खिलाड़ियों को शारीरिक, मानसिक स्वास्थ की बलि तो चढ़ानी ही पड़ती है।''

कॉर्पोरेट दौड़ दम फुला देती है, उर्जा चूस लेती है, पस्त कर देती है। इंसान सफल तो हो जाता है पर इस सफलता का आनंद उठाने की स्थिति में नहीं रह जाता और इस दौड़ के पैरों तले कुचल चुके होते हैं- सारे नाते-रिश्ते, दोस्ती, शौक, तमन्ना और ज़िंदगी के वे सारे ख़्वाब जिन्हें आदमी सही मायनों में पूरा करना चाहता था।

बच्चों को ऐसा रखती है

माँ की आहट घर को ज़िन्दा रखती है
आँगन के हर फूल को ताज़ा रखती है
बढ़ जाती है कुछ ज़्यादा परवाज़ मेरी,
माँ जब सर पे हाथ दुआ का रखती है।
माँ के क़दमों में जन्नत भी पाई है,
आँखों में वो नूर ख़ुदा का रखती है।
हालात की धूप मुक़ाबिल जब आए,
ममता के आँचल का साया रखती है।
आँसू आहें-दर्द ख़ामोशी रंजो-ग़म,
सब कुछ सहकर मन बच्चों का रखती है।
चाहे गर्द ज़माने भर की उड़ा करे,
माँ मन के दरबान को उजला रखती है।
मिले उपेक्षा या आदर संतानों से,
माँ तो दिल में प्यार हमेशा रखती है।
सागर जैसे सीप में मोती रखता है,
माँ अपने बच्चों को ऐसा रखती है।

अज्ञात

ईश्वर के दूसरे कृपापात्रोंकी तरह इस पुस्तक का लेखक भी है जिस पर मोहब्बतें और मुसीबतें बराबरी से बरसी हैं पर ईश्वर क़ाबलियत न होने के बावजूद भी प्यार करने वाले लोग हमारे जीवन में भेज ही देता है। मेरी माँ आज भी इस उम्र में अपनी पलकों से मेरे बालों में कंघी करती है।

माँ जीवन भर मेरे लिये उस प्रकाश स्तंभ की तरह है जिसकी रोशनी में मैंने चलना सीखा। ज़िंदगी में जब भी कोई सपना चकनाचूर हुआ मैने माँ की गोद में सर रखकर पूछा- माँ, यह तमन्ना कब पूरी होगी माँ ने सदा सर सहलाकर, मुस्कराकर जवाब दिया ''वो तमन्ना ही क्या जो पूरी हो जाए .....'' पर हमेशा यह चमत्कार होता कि दूसरे ही दिन से मेरी वह उम्मीद पूरी होने लग जाती थी। इसे माँ की दुआओं का ही असर न कहूँ तो और क्या कहूँ...।

भोली प्यारी, पर उपकारी

गीता का वह सार बताती
और क़ुरान का पाठ पढ़ाती
सब धर्मों का धरम सिखाती
राम, मोहम्मद, ईसा, नानक
साई सरीखी मेरी माँ।

प्रेम का आटा गूँथ बनाती
श्यामल-धवल-चाँद-सी रोटी
ख़ुद कम खाकर हमें खिलाती
चक्की के पाटों में पिसती
कनक सरीखी मेरी माँ

अपने सिर को धूप में रखकर
बेटे को आँचल में ढँकती
नवजीवन को वो है गढ़ती
नौ महीने जब कोख में रखती
सब तापों से छाया देती
भोली प्यारी, पर उपकारी
वृक्ष सरीखी मेरी माँ

माँ तो है ही पर दिन-दिनभर
और कई रिश्तों में ढलती
दीदी, मौसी, बहू और भाभी
बीवी बनती बेटी बनती
कहीं कभी तो बाप भी बनती
बात-बात में रोज़ ही गलती
मोम सरीखी मेरी माँ

आशीष सोनी
खण्डवा

मुनव्वर माँ के आगे
यूँ कभी खुल कर नहीं रोना
जहाँ बुनियाद हो
इतनी नमी अच्छी नहीं होती

- मुनव्वर राना

जनाब मुनव्वर राना मुशायरों का सितारा नाम हैं। उनकी गिनती ऐसे सुख़नवरों में होती है जिन्होंने उर्दू शायरी को माशूक़ा की आग़ोश से उठाकर माँ के क़दमों में बैठा दिया। मैंने उनसे पूछा कि आप इतने बड़े ट्रांसपोर्ट व्यवसायी होकर कैसे इतनी ज़मीनी बातें कह देते हैं उनका कहना था कि मैं ख़ुद ज़मीन का आदमी हूँ। मैंने इस शायरी को पहले भोगा है फिर लिखा है। वे आगे कहते हैं जेठ की दुपहर में हमारे टूटे हुए छप्पर में जब मेरी माँ मुझे टाट केपर्दे लगाकर धूप से बचाने कि कोशिश करती थी तो मुझे माँ में वह मुर्ग़ी नज़र आने लगती थी जो अपने चूज़ों को हर ख़तरों से बचाने के लिये अपने नाज़ुक परों में छिपा लेती है। माँ की मुहब्बत के आँचल ने मुझे तो हमेशा महफूज़ रखा लेकिन ग़रीबी की लपटों ने माँ के खूबसूरत चेहरे को साँवला कर दिया। उसका रंग मटमेला कर दिया।

वे कहते हैं कि ज़ख़्म कैसे भी हों कुरेदने में अच्छा लगता है। अतीत कैसा भी रहा हो सोचिये तो मज़ा आता है। बचपन कैसा भी गुज़रा हो, राजसिंहासन से अच्छा होता है। मुझे नहीं मालूम ज़मींदारी कैसी होती है क्योंकि मैंने तो अनेकों बार माँ को भूखे सोते देखा है। मुझे क्या पता ज़मींदार कैसे होते हैं क्योंकि मैंने मुद्दतों अपने अब्बू के हाथों में ट्रक का स्टेयरिंग देखा है। मुमकिन है मेरे अब्बू ने भी ख़्वाब देखे हों क्योंकि एक थका माँदा ड्रायवर बहुत बेख़बरी की नींद सोता है। लेकिन मुझे मालूम है मेरी माँ ने कभी ख़्वाब नहीं देखे थे क्योंकि ख़्वाब तो वे आँखें देखती हैं जो सोती हैं, लेकिन मैंने अम्मी को कभी सोते नहीं देखा।

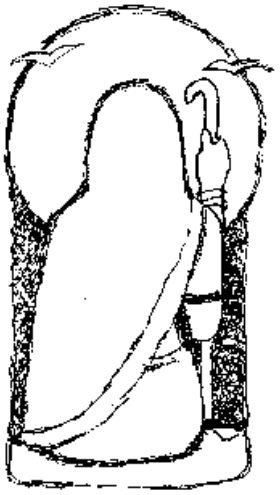

बल्बी हो गई अम्माँ

गोरी से पीली,
पीली से काली हो गई है अम्माँ
इक दिन मैंने देखा
सचमुच बूढ़ी हो गई है अम्माँ

कुछ बादल बेटे ने लूटे,
कुछ हरियाली बेटी ने
एक नदी थी,
कहाँ खो गई
रेती हो गई है अम्माँ

देख लिया है सोना-चाँदी
जब से उसके बक्से में
तब से बेटों की नज़रों में
अच्छी हो गई है अम्माँ

कल तक अम्माँ-अम्माँ
कहते फिरते थे जिसके पीछे
आज उन्हीं बच्चों के आगे
बच्ची हो गई है अम्माँ

घर के हर इक फ़र्द की आँखों में
दौलत का चश्मा है
सबका दिखता वक़्त क़ीमती
सस्ती हो गई है अम्माँ

बोझ समझते थे
भारी लगती थी लेकिन जबसे
अपने सर का साया समझा,
हल्की हो गई है अम्माँ।

रंजीत भट्टाचार्य
धमतरी

एक राजा थे। वे जहाँ तक हो सके भोजन बालक राजकुमार के साथ ही किया करते थे। एक बार का वाक़िया है, वे भोजन करने बैठ रहे थे तब राजकुमार पास ही में खेल रहे थे। राजा ने चार-पाँच बार बालक को आवाज़ दी पर खेल में मशग़ूल बालक ने अनसुनी कर दी। लाचार पिता ने माँ से उसे आवाज़ देने का आग्रह किया। माँ ने एक बार धीरे से आवाज़ दी बालक दौड़ा चला आया। जब राजा, राजकुमार के साथ खाना खाने बैठ गए तब पिता ने माँ से प्रश्न से किया - ''तुम्हारी आवाज़ में ऐसी क्या क़शिश थी कि बालक उल्टे पाँव आ गया जबकि मेरी चार-पाँच पुकार अंतरिक्ष में ही रह गयी।'' माँ ने तटस्थ भाव से उत्तर दिया- ''क्षमा करें महाराज। आपको स्वयं खाना, खाना था। आपने इस स्वार्थ से बालक को आवाज़ दी। मुझे उसे खाना खिलाना था मैंने इस नि:स्वार्थ भाव से उसे आवाज़ दी। आपकी और मेरी आवाज़ में सिर्फ़ यही फ़र्क़ था।''

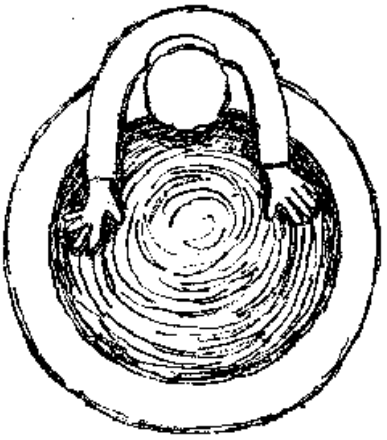

जब खाना परोसती थी

वे दिन बहुत दूर हो गए हैं
जब माँ के बिना परसे
पेट भरता ही नही था
वे दिन अथाह कुएँ में छूट कर गिरी
पीतल की चमकदार बाल्टी की तरह
अभी भी दबे हैं शायद कहीं दूर
फिर वो दिन आएँ
जब माँ की मौजूदगी में
कौर निगलना तक दुश्वार होने लगा था
जबकि वह अपने सबसे छोटे और बेकार बेटे के लिए

घी की कटोरी लेना कभी नहीं भूलती थी
उसने कभी नहीं पूछा कि मैं दिन भर
कहाँ भटकता रहता था
और अपने पान-तंबाकू के पैसे कहाँ से जुटाता था।
अक्सर परोसते वक़्त वह अधिक सहृदय होकर
मुझसे बार-बार पूछती होती
और थाली में झुकी गरदन के साथ
मैं रोटी के टुकड़े चबाने की
अपनी ही आवाज़ सुनता रहता
वह मेरी भूख और प्यास को
रत्ती-रत्ती पहचानती थी
और मेरे अक्सर अधपेट खाए उठने पर
बाद में जूठे बर्तन अबेरते
चौके में अकेले बड़बड़ाती रहती थी
बरामदे में छिपकर
मेरे कान उसके हर शब्द को लपक लेते थे
और आख़िर में उसका भगवान के लिए बड़बड़ाना
सबसे ख़ौंफनाक सिद्ध होता
और तब मैं दरवाज़ा खोल
देर रात तक के लिए सड़क के
एकांत और अंधेरे को समर्पित हो जाता
अब ये दिन भी उसी कुँए में

लोहे की वज़नी बाल्टी की तरह पड़े होंगे
अपने बीबी-बच्चों के साथ खाते हुए
अब खाने की वैसी राहत और बैचेनी
दोनों ही ग़ायब हो गई है
अब सब अपनी-अपनी ज़िम्मेंदारी से खाते है
और दूसरे के खाने के बारे में
एकदम निश्चिंत रहते हैं
फिर भी कभी कभार मेथी की भाजी या बेसन होने
पर मेरी भूख और प्यास को रत्ती-रत्ती टोहती
उसकी दृष्टि और आवाज़ तैरने लगती है
और फिर मैं पानी की मदद से
खाना गिटक कर कुछ देर के लिए
उसी कुँए में डूबी
उन्हीं बाल्टियों को ढूँडता रहता हूँ।

चंद्रकांत देवताले

लबों पे जिसके कभी
बद्दुआ नहीं होती
बस एक माँ है,
जो मुझसे ख़फ़ा नहीं होती

- मुनव्वर राना

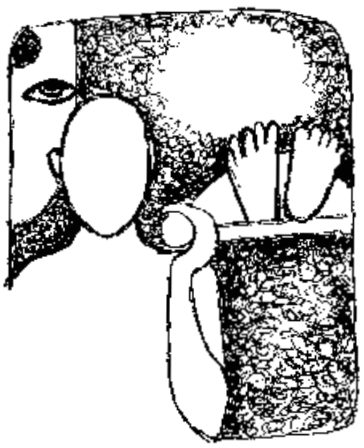

सबक़

माँ ने बेटे से पूछा- बेटा, यह बताओ कि हमारे शरीर का कौन-सा हिस्सा सबसे ज़्यादा महत्वपूर्ण है। किशोरवय बेटे ने कुछ देर अपनी खोपड़ी खुजाई। कुछ सकुचाते, मुस्कराते उसने जवाब दिया- माँ, कान।

बेटे का जवाब सुनकर माँ मुस्कराई। बोली- मगर बहुत से लोग तो बहरे होते है। ख़ैर, कोई बात नही, तुम इस बारे में फिर से सोचना। मैं मौक़ा आने पर तुमसे दोबारा यही सवाल पूछूँगी।

कई साल बीत गए। बेटा अब जवान हो चुका था। जीवन का कुछ बेहतर अनुभव भी हो चला था।

अब माँ ने फिर अपना सवाल दोहराया। बेटा इस अवसर का इंतज़ार ही कर रहा था। यह सवाल लगातार उसके दिमाग़ में घुमड़ रहा था और अब तक उसने जवाब भी सोच लिया था। इस बार उसका जवाब था- आँखें।

माँ ने बेटे की सराहना की कि वह बुद्धिमान हो गया है। मगर यह भी बता दिया कि उसके लिए यह भी सही जवाब नहीं है। आख़िर दुनिया में बहुत से लोग बिना इस नैमत के भी जीते हैं, सफल भी हैं और समाज के लिए बड़े-बड़े काम भी कर गुज़रते हैं।

बेटा थोड़ा उदास सा हो गया। माँ ने ढाढस बंधाया कि वह सही उत्तर के बहुत नज़दीक पहुँच गया है। थोड़ा समय और गुज़रने पर वह सही जवाब भी दे पाएगा। दोनों ने एक-दूसरे को मुस्करा कर देखा और फिर से अपने-अपने काम में लग गए। कुछ साल बाद इस परिवार में एक घटना घटित हुई। परिवार के मुखिया, यानी उस बेटे के दादाजी का निधन हो गया। दादाजी के निधन से पूरा परिवार दु:ख में डूब गया था। इसी दौरान में माँ की नज़र आँसू बहाते बेटे की ओर पड़ी। वह उठकर उसके पास जा बैठी। उसे सांत्वना दी।

कुछ ही देर में अर्थी उठाने का समय आ गया। इसी तैयारी के बीच माँ ने बेटे की ओर जिस तरह से देखा, बेटा भांप गया कि माँ अपना सवाल पूछने वाली है। उसे यह बात अच्छी नहीं लग रही थी। आख़िर यह भी कोई मौक़ा है, इस तरह के खेल का?

माँ ने बेटे के मनोभाव को समझते हुए भी अपना सवाल दोहरा ही दिया। साथ ही यह भी स्पष्ट कर दिया कि इसी समय यह सवाल करना ज़रुरी है, सो सवाल कर रही हूँ। बेटे के सामने इस घड़ी कोई जवाब नहीं था। वह भ्रमित सा माँ कि ओर देखता रहा। अब माँ की बारी थी। माँ ने कहा- बेटा, आज तुम्हारे लिए इस सच को जानने और सीखने का दिन है।

शरीर का सबसे महत्वपूर्ण अंग है कंधा। इसलिए नहीं कि आज तुम अपने दादाजी को इस पर अंतिम सफ़र के लिए ले जा सकोगे, बल्कि इसलिए कि यह अपने से ज़्यादा औरों के काम आने वाली चीज़ है। दुनिया में हर इंसान को अपने दु:ख आँसुओं में ढालकर बहाने को किसी दोस्त, किसी अपने का कंधा चाहिए होता है। यह दूसरे के काम आने वाली चीज़ है, सो यही सबसे ज़्यादा महत्वपूर्ण है।

ऐसी कोई भी चीज़, जो सिर्फ़ अपने काम आती हो, सबसे ज़्यादा महत्वपूर्ण नहीं हो सकती।

साभार - दैनिक भास्कर

एक माँ ही तो है जो हमें बेइंतहा प्यार करती है
और हमारी सारी बातों को ध्यान से सुनती है।
ऐसे समय भी, जब कोई हमारी परवाह नहीं करता।
वो सबकी कमी पूरी कर सकती है
पर उसकी कमी कोई पूरा नहीं कर सकता।
इसलिये आदमी कितना ही बूढ़ा हो जाए
हर पीड़ा के समय, कराहते हुए
वह माँ को ही याद करता है।

माँई ओ माँई

अंबर की ये ऊँचाई धरती की ये गहराई
तेरे मन में है समाई, माई.... ओ माई....

तेरा मन अमृत का प्याला, तुही काबा तुही शिवाला
तेरी ममता पावन दायी, माई.... ओ माई....

जी चाहे मैं तेरे पास रहूँ, बन के तेरा हमजोली
तेरे हाथ न आऊँ, छुप जाऊँ, यूँ खेलूँ आँख-मिचौली

परियों की कहानी सुना के, कोई मीठी लोरी गा के
कर दे सपने सुखदाई, माई....ओ माई....

संसार के ताने बाने से घबराता है मन मेरा
इन झूठे रिश्ते नातों में बस सच्चा प्यार है तेरा

सब दु:ख सुख में ढल जाएँ तेरी बाहें जो मिल जाएँ
मिल जाए मुझे ख़ुदाई, माई.... ओ माई....

फिर कोई शरारत हो मुझसे नाराज़ करूं मैं तुझको
फिर गाल पर थप्पी मार के तू सीने से लगा ले मुझको

बचपन की प्यास बुझा दे अपने हाथों से खिला दे
पल्लू में बंधी मिठाई, माई.... ओ माई.....

ताहिर फ़राज़

“घेर लेने को मुझे जब भी बलाएँ आ गईं
ढाल बनकर सामने माँ की दुआएँ आ गईं”

- मुनव्वर राना

मैं भी आम पुरुषों की तरह ही हूँ। न जीभ के स्वाद का कोइ तय पैमाना, न ही पेट की भूख का कोई नाप, कभी भिंडी की सब्ज़ी नहीं बनाने पर नाराज़ी तो कभी - 'क्या तुम्हें भिंडी के अलावा कोई और सब्ज़ी सूझती ही नही' कभी दाल में तेज़ तड़का चाहिए तो कभी तड़के से नाराज़ी। भूख का नाप भी ऐसा कि कभी तो चार रोटी में ही काम हो जाता था तो कभी आठ रोटी चट कर जाता। बचपन में एक दिन जब खाने बैठा तो सारी रोटियाँ चट कर गया। दो बार डकारने के बाद जब मेरी नज़र कटोरदान में गई तो सिर्फ एक रोटी ही बची थी तो मैंने माँ से पूछा कि तुम्हारा पेट एक रोटी से कैसे भरेगा ?

माँ ने मुस्कुरा कर कहा- माँ की भूख का क्या... उसकी भूख तो बचने वाली चपातियाँ तय करती है अधिक बच जाए तो उस दिन उसकी भूख बढ़ जाती है और कम बचे तो कम...।

परिवार कितना ही धनी हो या ग़रीब, पूरे परिवार के खाना खा लेने के बाद जो बचा है वही माँ के लिये छप्पन भोग है।

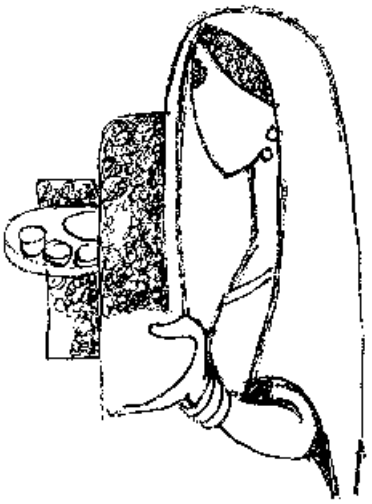

सहृदया

घर परिवार में बैठकर जब हम खाना खा रहे होते हैं तो हम कितना ही खा लें; माँ कामना करती है कि संतान एक रोटी और खा ले। हमारी लाख ना-नुकुर के बावजूद भी वह हमें आधी रोटी और खाने के लिये तो मना ही लेती है। ''चल ज़्यादा नख़रे मत कर, आधी रोटी ही ले ले।'' लेकिन माँ अपनी आधी रोटी भगवान जाने कौन से तराज़ू में तौलकर देती है कि उसके द्वारा बच्चों को परोसी गई आधी रोटी साइज़ में पौन रोटी से भी बड़ी ही रहती है। माँ तो वो है जो सदा खिला कर ही ख़ुश होती है।

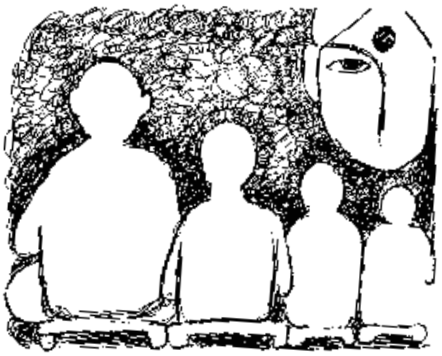

कमख़ुदा न थी परोसने वाली

चार जने बैठे जीमने रात का भोजन
सब बच-बच कर खा रहे
तीनों बच्चे तक समझदार
पीते बीच-बीच में पानी
पिता लेते नकली डकार
माँ थी
सबके बाद खाने वाली

जिसके लिए दाना नहीं
देगची में बची थी हलचल
चुल्लू-भर पानी की

और कटोरदान में भाप के
चंद्रमा जैसी
रोटी की छाया थी
पर कम ख़ुदा न थी
परोसने वाली
बहुत है अभी इसमें
मैंने तो देर से खाया है
कहते परोसती जाती

चन्द्रकांत देवताले

“बेबसी अपनी
कभी यूँ भी जता देती हूँ मैं
और भी घर को
क़रीने से सजा देती हूँ मैं”

- मीनाक्षी

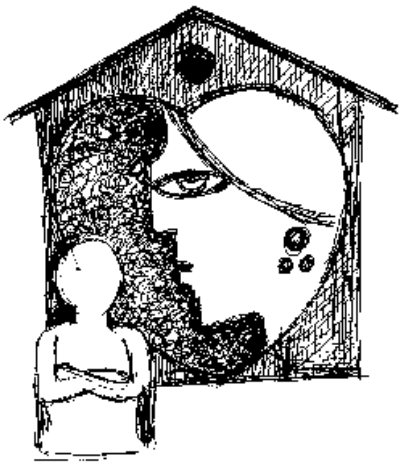

घर का दिल

हिन्दी फ़िल्म 'सिलसिला' में नायक से एक महिला प्रश्न करती है कि दुनिया का सबसे स्वादिष्ट खाना कहाँ का है। नायक का जवाब होता है माँ के हाथ का बना खाना। यह तय है कि मेज़बान कितनी ही महँगी तैयारी करे रसोईये की ताक़त नहीं कि वह खाने में अनूठा स्वाद डाल दे। अलौकिक स्वाद तो आता है खिलाने वाले की आत्मीयता, स्नेह और भावना से और भला माँ से बढ़कर शुभ भाव से कौन खिला सकता है।

पति महोदय खाना खा रहे थे, पत्नी ने घर में बचा एकमात्र लड्डू पति को परोस दिया। परोसने की देर ही थी कि पीछे से उनका 6 साल का लड़का आकर लड्डू

मांगने लगा। माँ ने कहा पिताजी से आधा ले ले। बच्चे ने प्रश्न किया आधा लड्डू क्यों लूँ? पिता ने कहा चल पूरा ले ले। बच्चे ने फिर प्रश्न किया जूठा क्यों लूँ ? कहते-कहते बच्चा ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा। मामला उलझ गया। माँ सारा तमाशा, आनंद लेते हुए देख रही थी। जब उससे नहीं रहा गया तो वह रसोई घर से एक ख़ाली डिब्बा लेकर बाहर आई और बेटे को किसी बहाने से एक मिनिट के लिए बाहर भेज दिया। इसके बाद माँ ने फटाफट पति की थाली से लड्डू उठाकर उसके दो लड्डू बना लिये। एक वापस पति को परोस दिया दूसरा डिब्बे में रख लिया। बेटा जब वापस आया तो माँ ने डिब्बे में से दूसरा लड्डू निकालकर उसके हाथ में रख दिया। बेटा ख़ुशी-ख़ुशी पिता को मुँह चिढ़ाता हुआ लड्डू लेकर बाहर भाग गया।

पिता परिवार का अगर दिमाग़ होता है तो माँ परिवार का दिल होती है। पिता अगर हेड ऑफ़ द फ़ेमिली है तो माँ हार्ट ऑफ़ द फ़ेमिली है और तय है दिमाग़ और दिल के द्वंद्व में देर-सवेर जीतता तो दिल ही है।

एक माँ ही तो है जो चमकती है
अपने बच्चों की सोच से।
ज़माने से उलट यह तो वह ही है जिसे
अपने मज़बूत और कमज़ोर बेटों में
हमेशा कमज़ोर ही ज़्यादा प्यारा होता है।
जो जीवन भर खटती रहती है हमारे लिए
लेकिन हम उसकी क़द्र करते हैं
उसका कारवाँ गुज़र जाने के बाद और
तब रह जाता है सिर्फ़ ग़ुबार ही ग़ुबार।

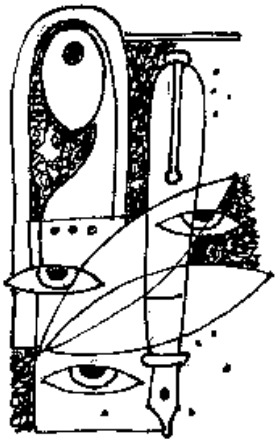

नहीं लिख सकता कविता

माँ के लिए संभव नही होगी मुझसे कविता
अमर चिऊंटियों का एक दस्ता
मेरे मस्तिष्क में रेंगता रहता है
माँ वहाँ रोज़ चुटकी-दो चुटकी आटा डाल जाती है
मैं जब भी सोचना शुरू करता हूँ
यह किस तरह होता होगा
घट्टी पीसने की आवाज़
मुझे घेरने बैठ जाती है
और मैं बैठे-बैठे दूसरी दुनिया ऊँघने लगता हूँ
जब भी कोई माँ छिलके उतारकर
चने मूँगफली या मटर के दाने

नन्ही हथेलियों पर रख देती है
तब मेरे हाथ अपनी जगह पर थरथराने लगते हैं
माँ ने हर चीज़ के छिलके उतारे मेरे लिए
देह, आत्मा, आग और पानी तक के छिलके उतारे
और मुझे कभी भूखा नही सोने दिया
मैंने धरती पर कविता लिखी है
चंद्रमा को गिटार में बदला है
समुद्र को शेर की तरह आकाश के
पिंजरे में खड़ा कर दिया
सूरज पर कभी भी कविता लिख दूँगा
माँ पर नही लिख सकता कविता

चंद्रकांत देवताले

जो भी आता है, सज़ा देता है
दोस्त बनकर दग़ा देता है
वो तो माँ का ही दिल है वरना...
मुफ़्त में कौन दुआ देता है

- अज्ञात

लेखक सूर्यकांत नागर लिखते हैं...स्त्री को वामा कहा जाता है सदैव बायें हाथ बैठने वाली। उसे दाहिने हाथ का स्थान देने के लिए पुरुष तैयार ही नहीं है। दाहिने हाथ को शुभ माना जाता है, पूजा-पाठ व भोजन व सारे शुभकार्य दाहिने हाथ से किये जाते है। बायाँ हाथ अशुभ कार्य के लिये है। उसी बायें हाथ पर पत्नी का स्थान है।

पुरुष की तुलना में स्त्री अधिक नमनीय, निष्ठावान और ईमानदार होती है। शायद इसीलिये संस्कृति पर चौ-तरफ़ा हमला होने के बावजूद भी हमारे समाज में आज भी काफ़ी हद तक भारतीयता मौजूद है।

एक बार लोकमान्य तिलक से किसी ने पूछा कि भारत में स्त्रियाँ अच्छा वर पाने के लिये व्रत रखती है लेकिन पुरुषों के लिये ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। तिलक ने उत्तर दिया - भारत की स्त्रियाँ सभी अच्छी हैं मुश्किल केवल अच्छे पुरुषों को ढूँढ़ने की है। इसलिये स्त्रियों को ही गौरी व्रत रखना पड़ता है।

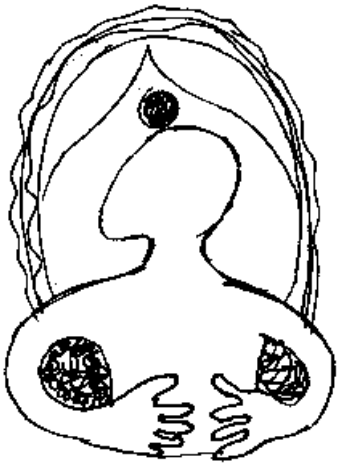

बहुत सारा हूँ उसका

पिता मैं बहुत थोड़ा हूँ तुम्हारा,
और बहुत सारा हूँ उसका
जिसका नाम तुम्हारे
दफ़्तर के लोग नहीं जानते
नहीं जानती सरकारी फ़ाइलें
नहीं जानती मेरी टीचर
नहीं जानते मेरे दोस्त
मैं बहुत सारा हूँ उसका
...जिसने मुझे बूंद से
पहाड़ तक ढोया
सहन की असह्य पीड़ा

और मृत्यु के लिए रही तैयार
केवल और केवल मेरी
पैदाइश के लिए
पिता
मैं बहुत थोड़ा हूँ तुम्हारा
और बहुत सारा हूँ उसका
जिसका नाम मेरे
गुम हो जाने पर
सिपाही नही पूछता...

✍
श्री रंग

“

याद आ गयी माँ,
मैनें देखा जब कभी
मोमबत्ती को पिघलकर
रोशनी देते हुए

”

- लक्ष्मीशंकर वाजपेयी

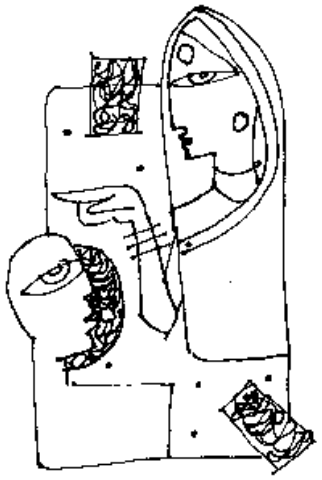

मार्गदर्शक

अहा! ज़िंदगी में... *रुडयार्ड किपलिंग* लिखते हैं जीवन की हर परिस्थिति में एक सच्चे मित्र और मार्गदर्शक की भाँति माँ अपने शरीर के अंश का साथ देती है। जब भारी और अचानक आई विपत्तियाँ मनुष्य को घेर लेती हैं जब समृद्धि का स्थान दुर्भाग्य ले लेता है, जब सुख में साथ देने वाले मित्र साथ छोड़ देते हैं और दु:ख अपना घेरा चारों ओर बना देता है, तब वह अकेली इन विपरीत परिस्थितियों में प्रोत्साहन का माध्यम बनती है। अपनी शिराओं के साथ लगातार डटे रहकर दु:खों के काले बादलों को हटाने व हृदय को शांति का मार्ग मिलने तक वह सहायक होती है।

माँ का प्रेम ही बुरे से बुरे वक़्त में सहायता देने के लिए बच्चे को खोजता हुआ चला आता है, चाहे वह सबसे ऊंचा पर्वत शिखर ही क्यों न हो। अगर बच्चा समुद्र की गहराइयों में डूब जाए तो केवल माँ के आँसू ही उस बच्चे तक पहुँच सकते हैं, अगर बच्चे की आत्मा और शरीर श्रापित हो जाए तो केवल माँ की प्रार्थना ही उसे पूर्णता दे सकती है। प्रेम की यह अवस्था उस स्थिति में भी बरक़रार रहती है जब बालक ज़िद्दी, कृतघ्न, चिड़चिड़ा या बुरा हो, लेकिन माँ को ऐसे में भी इस बात का गर्व रहता है कि उसने एक इंसान को जन्म दिया है, जो उसकी दृष्टि में दयालु, विनम्र, बहादुर और बुद्धिमान है। मन ही मन वह सोचती है, दोनों चाहे दुनिया के किसी कोने में रहें, लेकिन प्रेम की यह अवस्था उनकी निकटता को बनाए रखे। लेकिन वो ही माँ जब चले जाती है हमें छोड़कर तब याद आती है उसकी एक-एक बात - वो जो हम चाहकर भी नहीं कर पाए उसके लिये। उसकी एक-एक चीज़ें, उसकी साड़ी, उसकी लाठी, उसका चश्मा।

उसका हृदय बच्चे के लिए एक पाठशाला है, जहाँ एक शिक्षक की तरह अनुशासन और पालना देने वाली माँ का एक स्पर्श मात्र भी बालक को एक सुरक्षित आवरण प्रदान कर देता है। उसे संसार में अपने महत्व की अनुभूति होती है। उसके शब्द, स्पर्श और प्रेम मिलकर एक ऐसे घेरे का निर्माण करते हैं जहाँ वह स्वयं को प्रसन्न, तनाव रहित और भाग्यशाली अनुभव करता है। इतना कुछ देने की यह अद्‌भूत क्षमता माँ की प्राकृतिक विशेषता है, जो मातृत्व पूर्वाभास से जुड़ी है। मातृत्व पूर्वाभास में उपस्थित शक्ति माँ को अपने बच्चे की अनकही पीड़ाओं और तकलीफ़ों का आभास करवाती है, चाहे वह अपने बच्चे के साथ हो या उससे मीलों दूर। माँ का यह स्वचलित शस्त्र इतना अधिक शक्तिशाली होता है कि बच्चा जब तक स्वयं ख़तरे का अनुभव कर पाए या उससे निबटने के लिए

प्रभावी क़दम उठा पाए माँ को उसकी विपत्तियों का आभास हो जाता है। दरअसल मानव के मस्तिष्क और आत्मा में संवाद के कई माध्यम होते हैं, जिन्हें वैज्ञानिक शब्दों में परिभाषित नहीं किया जा सकता और ये क्षमताएँ माँ और बच्चे में नैसर्गिक रुप से होती हैं। जहाँ भयानक मुसीबतों से बच्चे को बचाने की अद्वितीय शक्तियाँ माँ के पास होती हैं। किसी बीमार या अक्षम बच्चे की देखभाल अपने जीवन के अंत तक करना या उसके जीवन के लिए अपनी ज़िंदगी का बलिदान देना, ऐसी ही विलक्षण शक्तियों का उदाहरण है। मातृत्व के ये अनूठे गुण जीवन की हर परिस्थितियों को सभी अर्थों में प्रभावित करतें है। इस बात से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि माँ ज़्यादा समय साथ रहे या न रहे, लेकिन वह हृदय के साथ-साथ हमारे अचेतन और चेतन कार्यों में मौजूद होती है। कारण स्पष्ट है कि बच्चे को माँ नौ महीने तक गर्भ में रखती है, अपनी बाहों में तीन साल तक और अपने हृदय में तब तक, जब तक कि ख़ुद उसकी मृत्यु न हो जाए।

> *रात में बच्चे के रोने पर पुरुष बस कुनमुनाकर रह जाते हैं और फिर सो जाते हैं, लेकिन माँ तो सो ही नहीं सकती। लाखों साल के विकास क्रम का असर है कि बच्चे की आहट पर उसे जागना ही है...*

अम्मा तेरी मुनिया

सीवन टूटी जब कपड़ों की या उधड़ी जब तुरपाई
कभी तवे पर हाथ जला तब अम्मी तेरी याद आई।
छोटी-छोटी लोई से मैं, सूरज चाँद बनाती थी।
जली-कटी उस रोटी को तू, बड़े चाव से खाती थी।
अम्मा तेरी मुनिया के भी, पकने लगे रेशमी बाल
बड़े प्यार से तेल रमाकर, तूने की थी साज-संभाल।
तूने तो माँ बीस बरस के, बाद मुझे भेजा-ससुराल
नन्ही बच्ची देस पराया,किसे सुनाऊ दिल का हाल।
तेरी ममता की गर्मी, अब भी हर रात रुलाती है
बेटी की जब हूक उठे तो, याद तुम्हारी आती है।
जन्म मेरा फिर तेरी कोख से, तुझसा ही जीवन पाऊँ
बेटी हो हर बार मेरी, फिर ख़ुद को उसमें दोहराऊँ

मुन्नी शर्मा, अजमेर

सृजन

ब्रह्माजी सृजन कर रहे थे। पास से नारदजी निकले। उन्होंने ब्रह्माजी से पूछा- ''पिछले कुछ दिनों से आपको लगातार काम करते हुए देख रहा हूँ आप आख़िर बना क्या रहे हैं ?''... '' मैं 'माँ' बना रहा हूँ..'' - ब्रह्माजी का उत्तर था। नारदजी ने प्रतिप्रश्न किया- ''माँ कैसे बनती है ?'' ब्रह्माजी का जो उत्तर था उसे सुनकर नारदजी की पलकों में नमी फैल गई ... ब्रह्माजी ने कहा- ''जिसकी कोख से इंसानियत जन्मे और जिसकी गोद में दुनिया समा जाए। जो छू ले तो सारे सदमे और थकान दूर हो जाए। जो बच्चों की आवाज़ से ही उनकी परेशानी भाँप जाए पर अपनी

रूग्णता सारे संसार से छिपाती फिरे। जिसकी संतान परदेस में भी रोए तो उसका आँचल देश में भीग जाए। जिसके दर्शन मात्र से दुनिया कृतार्थ हो जाए। जिसे मनुष्य चाहे तकलीफ़ भी दे तो उसके दिल से दुआ ही निकलती रहेगी। जिसके पूत भले ही कपूत हो जाएँ पर वह कुमाता नहीं होती।'' ईश्वर ने नारदजी से कहा -

''मैं स्वयंअपने आप को बना रहा हूँ।''

हमारे कुछ गुनाहों की
सज़ा भी साथ चलती है
हम अब तन्हा नहीं चलते,
दवा भी साथ चलती है
अभी ज़िंदा है माँ मेरी,
मुझे कुछ हो नहीं सकता
मैं घर से जब निकलता हूँ,
दुआ भी साथ चलती है

- मुनव्वर राना

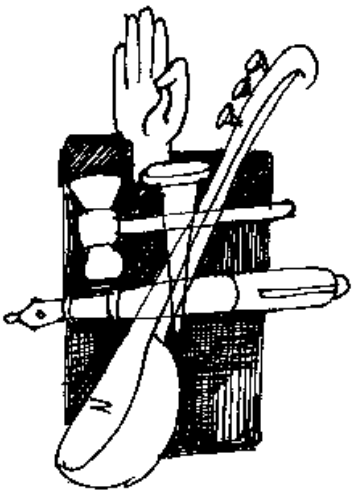

एक महाकाव्य

मैंने एक मूर्तिकार से पूछा क्या तुम एक चमत्कार दिखलाओगे ?
माँ की मूरत बनाओगे ?
तो वह बोला- यदि कोशिश करूँगा तो सूरज को दीपक दिखाने जैसा अपराध कर जाऊँगा।
अरे जिसने ख़ुद मुझे बनाया है, मैं क्या ख़ाक उसकी मूरत बनाऊँगा।

फिर मैंने एक चित्रकार से कहा- तुम तभी चित्रकार कहलाओगे,
जब माँ की तस्वीर बनाओगे ?

तो उसने कहा - मैं तो स्वयं दुनिया के कैनवस पर
माँ द्वारा बनाई तस्वीर हूँ मित्र।
मैं कैसे बनाऊँगा उसका चित्र ?

तब मैंने संगीतकार से कहा- तुम्हीं अपने संगीत का जादू दिखलाओ,
कोई नई तान, नया गान छेड़कर माँ का आभास कराओ।
तो वह बोला जिसने मुझे दी है आवाज़ और सातों स्वर,
मैं असमर्थ हूँ कि उसका आभास कर पाऊँगा मुखर।

फिर मैंने एक नर्तक से कहा- कि तुम्हारे नृत्य में निश्चित होगी ऐसी महिमा, जो प्रस्तुत कर सके माँ की भंगिमा।
तो वह बोला जिसने मुझे अँगुली पकड़कर चलना सिखाया है,
ये बंदा आज तक उसकी भंगिमाएं नृत्य में नहीं उतार पाया है।

अंत में मैंने एक कवि से कहा तुम तो शब्दों के शिल्पकार हो,
कल्पनाओं के राजकुमार हो,
तुम्हीं कोई चमत्कार दिखलाओ, हो सके तो माँ पर कोई कविता बनाओ,
तो वह बोला माँ, माँ, माँ, ।

मैंने कहा- यह तो शीर्षक है कविता कहाँ?
तो वह बोला माँ तो हर उपमाओं की सीमाओं से ऊपर है,
उसका स्थान तो हर व्यक्ति के हृदय पर है,
और जो माँ की महिमा का वर्णन करे ऐसा न कोई कवि है न काव्य है,
अरे ''माँ'' शब्द ही एक सम्पूर्ण महाकाव्य है।

अज्ञात

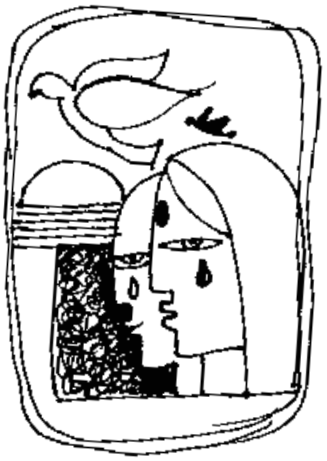

बिना माँ का घर

दूर कहीं रेडियो पर गाना बज रहा था- ''आ जा उम्र बहुत है छोटी, अपने घर में भी है रोटी.... चिट्ठी आई है.. आई है..चिट्ठी आई है।'' सुनकर आँसू छलक आए। बहुत पीड़ा होती है जब देखते हैं अपना सारा जीवन बच्चों पर होम कर देने वाले माता-पिता उनके होते हुए अकेले रहते हैं। एक दिन मैंने किसी से पूछा वादे और यादें में क्या फ़र्क़ है जवाब मिला- वादे इंसान तोड़ता है और यादें... यादें इंसान को तोड़ देती हैं। ज्ञानी कहते हैं संसार में इससे बड़ी करूणता कहीं नहीं है - पहली तो बिना माँ का घर और दूसरी बिना

घर की माँ। आज के इस भौतिकवाद में बच्चे डॉक्टर, इंजीनियर या बड़ा आदमी बनकर बाहर चले जाते हैं और पैतृक गाँव में रह जाते हैं अकेले माता-पिता। गाँव के मिलने वालों को वे खोखली हँसी के साथ बेटे की तरक़्क़ी की गाथा सुनाते हों या पोते-पोतियों की फोटो दिखाते हों पर उनके हृदय की टीस छलक ही जाती है। दुविधा ऐसी हो जाती है कि बरसों अलग रह गए बेटा-बहू के साथ माँ-बाप को बड़े शहर में रहना नहीं रास आता और पैतृक गाँव में बेटों के लायक रोज़गार नहीं रहता।

उड़ान भरने के लिये हम कितनी ही दूर आसमान के साथ क्यों न चलें, पाँव जब आधार माँगते हैं तो हमें ज़मीन की याद आने लगती है। ज़मीन के ख़ुशनुमा रंग और उसकी सौंधी महक अंतरिक्ष में नहीं मिलती। लेकिन जो संतान आसमान की बुलंदी पर है उसे यह सोचने की फ़ुर्सत कहाँ ? शायद इसीलिये एक शायर कहता है -

दिल के लहू को मेहँदी ने छीन लिया
हुआ जो बेटा जवाँ तो बहू ने छीन लिया

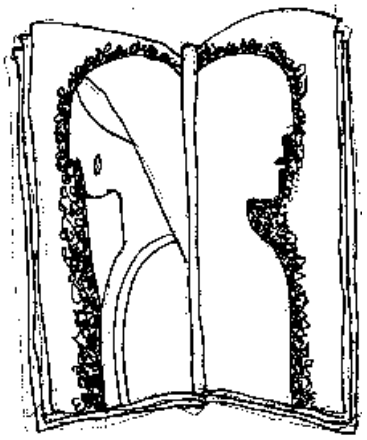

बही खातों वाली माँ...

वह तुमसे किसी काग़ज़ पर दस्तख़त नहीं लेती
पर तुम्हें अपना घरौंदा बनाने के लिए काग़ज़ों
पर उसके अँगूठे की छाप चाहिए।
ऑफ़िस से छुट्टी और बदली के लिए,
तुमने उसकी गिरी तबियत का सहारा लिया।
पर रातों को जागकर तुम्हारी बीमारी में सेवा
करने का उसने हवाला नहीं दिया।
तुम आज उसकी जीवन संध्या पर दो साड़ी,
एक चादर पर ख़र्चे रूपयों का हिसाब देते हो।
उसने तो तुम पर ख़र्चे अपने क़ीमती वक़्त का
एहसास भी नहीं दिया।

चश्मा इधर-उधर रखकर भूल जाने पर
तुम उस पर झल्लाते रहे।
बचपन में सिखाई तमाम शिक्षाओं को भूल
जाने पर भी उसने तुम्हें झिड़का नहीं।
तुम्हारी ज़रूरतों में उसकी बीमारी के मेडिकल
बिल कितने काम आते हैं।
पर सहेजकर रखी गई तुम्हारी बचपन की
अठखेलियाँ और शरारतों का चेक तो
उसने भुनाया ही नही।
अपनी नाक़ामयाबियों का ज़िम्मेदार उसे मान
तुमने उसके लिए क्या किया।
पर तुम्हारी असफलताओं पर झिड़कने की बजाय
उसने तुम्हें सदा दुलारा।
तुम आज उसके होने मात्र से विचलित हो
और वह तुम्हारी ऊँचाइयों का स्मरण करके मुग्ध है।
वह जानती है...
तुम अब कभी नहीं आओगे,
उसे साथ घर नहीं ले जाओगे।
क्योंकि वह बेहद विशाल है
और तेरा दिल बहुत छोटा
तू इस कड़वे सच को स्वीकार ले अब
कि वो क्षमादायिनी 'माँ' है
और तू ख़ुदगर्ज़ बेटा।

ममता तिवारी, भोपाल

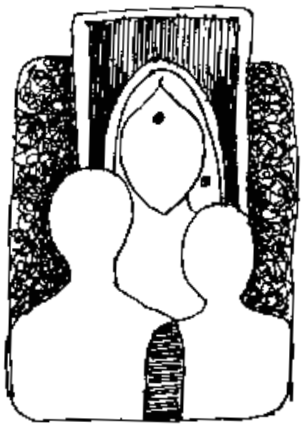

बात-बात का फ़र्क़

मेरी परिचित एक महिला जो स्वयं अच्छे पद पर कार्यरत थीं उनका बेटा बाहर महानगर में नौकरी करता था । उन्होंने एक अच्छा हिम्मत का काम किया। बेटे की शादी तय होते ही स्वयं की नौकरी को तिलांजलि दे दी और बेटे के साथ जाकर रहने लगीं। लोगों ने प्रश्न किया अभी तो आप पाँच-दस साल और यहाँ नौकरी कर सकती थीं। उन्होंने उत्तर दिया। आज अगर बेटे के साथ जाकर रह लूँगी तो बहू मेरे घर में आएगी पर अगर पाँच-दस साल बाद जाऊँगी तो मुझे बहू के घर में जाना पड़ेगा । दोनों में ज़मीन आसमान का फ़र्क़ है । काश ! संसार की सारी

माताओं में इतनी हिम्मत और दूरदृष्टि आ जाए। अगर यह नही आई तो उनका बेटा भी कुमार अंबुज की इन पंक्तियों को दोहराता ही नज़र आएगा

मैं चाहूँ तो भी नहीं रोक सकता
माँ को जाने से
भूल चुका हूँ मैं हठ करना
दूर-दूर तक नहीं बची रह गई है
मुझसे अबोधता
धीरे-धीरे मैं ख़ुद चला आया हूँ
माँ से इतनी दूर कि
मेरे घर में अब माँ
एक अतिथि है।

“माँ–बाप की वफ़ा को
जफ़ा उसकी खा गई
जन्नत ख़िसक के
बीवी के क़दमों में आ गई”

- हबीब आलम, खण्डवा

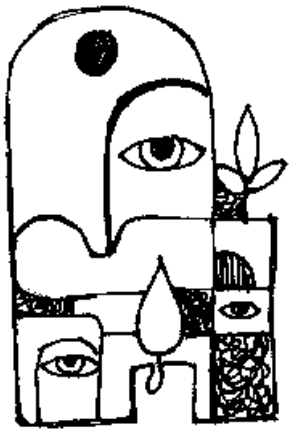

मातृत्व

बात उस रात की है, जब नार्वे की सुविख्यात रचनाकार श्रीमती सिग्रिड अनसेट को नोबेल पुरस्कार मिलने की सूचना मिली थी। ख़बर फैलते देर कहाँ लगती है ? पत्रकारों का झुंड उनके घर आ धमका। श्रीमती सिग्रिड ने अत्यंत विनम्र लहज़े से पत्रकारों से कहा- ''पधारने के लिए आप सभी का आभार है! पर खेद है, आप सभी से हमारी मुलाकात सुबह होगी।''

ऐसा क्यों? क्या आप पुरस्कार पाकर प्रसन्नता का अनुभव नही कर रहीं ? एक पत्रकार ने जानना चाहा।

''पुरस्कार पाकर मैं प्रसन्न हूँ, पर एक माँ होने के नाते अभी-अभी सोये बच्चे के साथ रहना मैं ज़्यादा ज़रुरी

समझती हूँ। कृपया एक माँ की भावनाओं को समझें। इसे अन्यथा न लें। असुविधा के लिए माफ़ी चाहूँगी'' और वह अपने बच्चे के कमरे की ओर चल दीं।

एक माँ ही तो है जो सदैव हाज़िर है अपनी संतानों के लिए अपनी मुस्कुराहट, अपनापन और उत्साहित आलिंगन लिए। जो प्रोत्साहित करती है हमारे सपनों को, प्रशंसा करती है हमारी ऊँचाईयों की, समझाती है हमारी ग़लतियों पर और गर्व करती है हमेशा हम पर।

एक माँ ही तो है जो वरदान में मिली मोमबत्ती की तरह जीवन की लंबी रातों में हमारे लिये जलती है पर रोशन करती है हमारे लिए राहें। चाहे माँ रहे या दुर्भाग्यवश न रहे पर माँ एक ऐसा चित्र है जो जीवन में कभी धुंधला नहीं पड़ता है, न तो आँखों में और न ही आत्मा में।

सत्येन्द्र चतुर्वेदी
साभार - अहा ! ज़िंदगी

कहते हैं – स्त्रियां जीवन शक्ति हैं,
मातृत्व शक्ति हैं अतएव उनकी प्रवृत्ति में निर्माण ही है।
उनमें शिव का अंश अधिक और रूद्र का रूप कम है।
स्त्री एक पीढ़ी को
एक दूसरे से जोड़ने वाली कड़ी है।

महज़ एक औरत नहीं

चिलकती हुई धूप में खड़ा
वह बरगद का छायादार पेड़
एक चित्र है मेरी माँ के आँचल का,

उसके सिर पर जलता हुआ सूरज है
बावजूद इसके आँचल में छाया है प्यार की
मिट्टी का क़र्ज़ा है
क़र्ज़े पर सूद है
फिर भी हर शिरा में दूध है
डालों पर नीड़ है
नीड़ में कुछ पंछी हैं पीड़ा के, प्यार के,

कभी-कभी कर्कश स्वरों में
चीख़ते हैं कौए अपमान के,
मगर यह सब कुछ
वह चुपचाप सह लेता है
सबको अपना मानकर

आकाश में
अक्सर बसंत नहीं होता
ग्रीष्म की तपन और धूल भरी लू के
लंबे सिलसिलों के बाद
हम नहीं चाहते कि शाम ढले
या रात सुलगे
मगर यह छायादार बरगद
न ग्रीष्म से डरता है
न शाम के लिये तरसता है
जो मिट्टी से खींच लाती है बसंत
वह भी तब, जबकि
हवाओं में होता है पतझर।
शायद वही ताक़त
जिससे माँ की शिराओं में
बहता हुआ रक्त
शिशु की किलकारी सुनते ही
बन जाया करता है दूध।

माँ महज़ एक औरत नहीं
ममता का एक पेड़ भी होती है
जो निरंतर आत्मसात करती है आग
और उगलती है छाया

चिलकती धूप में खड़ा
वह बरगद का छायादार पेड़
एक चित्र है मेरी माँ के आँचल का।

गोविन्द गुंजन
खण्डवा

चील कौओं की अदालत में है
मुजरिम कोयल
देखिये वक़्त
अब क्या फ़ैसला देता है
मैं किसी बच्चे की मानिंद
सुबक उठता हूँ
जब कोई माँ की तरह
मुझको दुआ देता है

- नीरज

बालकवि बैरागी कहते हैं... अपने बारे में कुछ बातें लिखते हुए मुझे गर्व होता है, एक तो यह कि मैं अपनी माँ का निर्माण हूँ, कठोर से कठोर और क्रूर से क्रूर परिस्थितियों में भी मेरी माँ ने मुझे टूटने नहीं दिया। कभी भी उदास, हताश और निराश नहीं होने दिया। मेरी आँखों के आँसू सदा उसने अपने आँचल से पोंछे। दूसरी ओर सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि मेरी माँ निरक्षर ज़रूर थी, पर अपढ़ नहीं थी। वह किसी भी पाठशाला में पढ़ने नहीं गई, किन्तु जीवन के विश्वविद्यालय की वह स्वर्ण पदक विजेता, सर्वोच्च उपाधि धारिणी, डी.लिट. थी।

न जाने कितने ऐसे लोग जिनकी माँ बहुत ज़्यादा शिक्षित नहीं है, वे बाल कवि बैरागी के इस कथन से जरूर इत्तफ़ाक़ रखते होंगे।

राजस्थानी और हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि श्री कन्हैयालाल सेठिया का एक दोहा है...

कती दाण बोबो दियो, माँ कद राखे याद
गिणती में पड़ भूल ग्यो मन, अनगिणरो स्वाद।

अर्थ बहुत सरल है, बच्चे को कितनी बार स्तनपान कराया, माँ इसकी न तो गिनती करती है ना ही इसे याद करती है। लेकिन बच्चा जब बड़ा होता है तो वह गिनती में पड़ जाता है- तेने ये नहीं किया, वो नहीं किया।

ज्यों ही वह गिनती में पड़ता है अनगिन का स्वाद भूल जाता है। अनगिन या अगणित ईश्वर से विमुख हो जाता है। यह अनगिन स्तनपान का सामर्थ्य ही माँ को ईश्वर बनाता है। पुरुष के पास यह सामर्थ्य नहीं है। माँ हमारे लिये सशरीर ईश्वर है। हम हमेशा इस ईश्वर के सामने है, ईश्वर हमारे सामने है। थाम लिजिये इन भगवान के हाथों को, कहीं यह हम से दूर न चले जाए...

ननिहाल

माँ की गोद में
ननिहाल जाता मैं
कभी सोच ही नहीं पाया
उन दिनों
नानी को देखकर भी
कि माँ की भी कोई माँ हो सकती है
ज़्यादा से ज़्यादा
मैंने यही सोचा
कि मुझे ननिहाल दिखाने के लिए
माँ ले आती है यहाँ
और ख़ुद भी आ जाती है
साथ-साथ।
पर एक दिन

ननिहाल से आया एक संदेश
जब पड़ा धीरे से
माँ के कानों में,
एकबारगी सूनी-सी हो गई माँ
फिर नैनों में भर आया नीर
और दयां-दयां कर रोई माँ
जैसे मैं रोया करता था
माँ से ज़रा भी दूर होते ही।
उस दिन भी माँ के पास खड़ा मैं भी रोया
मेरी माँ जो रोई थी।

उसी दिन से
माँ के क्षण-क्षण में
चस्पा वह उदासी
और गहरा जाती है
ननिहाल और नानी का
कोई ज़िक्र छिड़ते ही।

माँ की पथराई आँखें
जैसे कह रही हों
बेटा !
नानी बिना कैसा ननिहाल
नानी बिना कैसा ननिहाल...

और मेरे आँसू
जैसे माँ की आँखे पोंछते हुए
सोच सकते हो आज कि
माँ की भी कोई माँ थी
एकदम वैसी ही
जैसी अद्‌भुत है मेरी माँ।

-कुमार अजय

फ़िल्मी कहानी जैसी यह सच्ची घटना हमारे खंडवा की ही है। 1988 में छह साल की उम्र में शेरू और उसके दो भाई बुरहानपुर से ट्रेन से लौट रहे थे। एक भाई गुड्डू ट्रेन से गिर गया, जबकि शेरू की आँख लग गई। दूसरा भाई कल्लू खंडवा में उतर गया। ट्रेन कोलकाता पहुँच गई। यहाँ शेरू एक गैंग के हाथ लग गया। वो लोग उससे रोज़ भीख मँगवाते थे। किसी तरह एक मछुआरे परिवार की महिला ने उसे नवजीवन संस्था तक पहुँचा दिया। यहाँ से एक ऑस्ट्रेलियन दंपत्ति ने उसे गोद ले लिया। उसने विदेश ले जाकर शेरू को शारू ब्राली का नाम दिया। यहीं उसने बीबीए की पढ़ाई पूरी की। फिर वह ब्राली परिवार की फ़ार्मिंग एग्रीकल्चर कंपनी में काम करता रहा। शेरू के मन में शहर का नाम ब्रह्मपुर सही नाम बुरहानपुर था। भारत के नक़्शे में देशभर में ब्रह्मपुर बुरहानपुर को ढूँढा। फ़ेसबुक पर कुछ लोगों से लोकेशन पूछी कि रेल्वे स्टेशन के पास नदी, ब्रिज और क़ब्रिस्तान किस शहर में है। किसी ने यह लोकेशन खंडवा में होना बताई। गूगल मैप्स पर चार साल की कोशिश के बाद वह अपना घर ढूँढने में सफल रहा। इसके बाद क्या था, वह खंडवा के लिए

निकल पड़ा। उसके पास अपने भाई-बहन के साथ खिंचवाया हुआ बचपन का फ़ोटो भी था। गणेश तलाई मस्जिद के पास घर होना उसके ज़हन में था। नक़्शे को आधार बनाकर वह इसी साल 12 फ़रवरी को सीधे घर पहुँचा और अपनी उस माँ से लिपट गया। जिसके लिये वह पिछले पच्चीस सालों से तड़प रहा था... बेटे को हिंदी नहीं आती और माँ को अंग्रेज़ी... पर मुहब्बत ज़ुबान की मोहताज कब थी...खंडवा की उस गंदी बस्ती में अपनी बूढ़ी माँ की गोद में सर रखकर लेटे ऑस्ट्रेलिया के इस धनी बिज़नेसमेन को देखकर मेरे कंठ से सिर्फ़ यही शब्द फूटे...धन्य हैं ऐसे बेटे।

“जब तक रहा हूँ
धूप में चादर बना रहा
मैं अपनी माँ का
आख़िरी जेवर बना रहा”

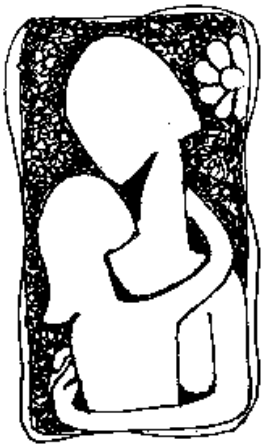

क्योंकि मैं माँ हूँ

महारानी विक्टोरिया की पुत्री एलिस का बेटा संक्रामक रोग से ग्रसित था। बच्चे की साँस से भी रोग फैलने का ख़तरा था। माँ हमेशा बच्चे को गोद में लिये रहती थी। एक बार बच्चे ने माँ से कहा, माँ, मुझे प्यार क्यों नहीं करती, मेरा माथा चूमे कितना समय हो गया। दस वर्षीय बच्चे की मायूस मनुहार को माँ नकार न सकी और उसने भाव विह्वल होकर एक वात्सल्य भरा चुम्बन बच्चे के सिर पर अंकित कर दिया। अगले दिन माँ बीमार हो गई। सारे इलाज बेमानी हो गए। डॉक्टरों ने कहा, आपको पता था कि बच्चे को चूमना यानी मौत को आमंत्रित करना है, फिर आपने ऐसा क्यों किया ?

'क्योंकि मैं माँ हूँ!' एलिस का उत्तर था। एलिस की समाधि पर उसके द्वारा कहा गया अन्तिम यह वाक्य लिखा है।... ऐसी होती है माँ।

चक्की

रोज़ सुबह मुँह अंधेरे
दूध बिलोने से पहले
माँ चक्की पीसती
और मैं आराम से सोता
तारीफ़ों में बंधी
माँ
जिसे मैंने कभी सोते
नहीं देखा
आज जवान होने पर
एक प्रश्न घुमड़ आया है
पिसती
चक्की थी ?
या माँ ?

दिविक रमेश

माँ का बुलावा

एक जाने माने संगीतकार थे। उन्हें एक अजीब सा शौक़ था, कहीं जंगल में तन्हाई में बैठना तबला बजाना। एक बार देखते हैं कि जैसे ही उन्होंने जंगल में तबला बजाना प्रारंभ किया, तबले की आवाज़ सुनकर बकरी का एक नन्हा-सा बच्चा आ गया। जैसे-जैसे संगीतकार तबला बजाते, वह कूद-कूद कर नाचता जाता। फिर तो जैसे यह हमेशा का क्रम हो गया, संगीतकार का तबला बजाना और उस मेमने का उछलना, नाचना।

एक दिन जब उन तबला वादक से नहीं रहा गया उन्होंने उस मेमने से पूछा...क्या तुम पिछले जन्म के कोई संगीतकार हो या फिर तबले के मर्मज्ञ जो

शास्त्रीय संगीत का इतना गहरा ज्ञान रखते हैं। तुम्हें मेरी राग-रागिनियों की ये पेचिदगियाँ कैसे समझ में आ जाती हैं।

उस मेमने ने कहा हुज़ूर दर-असल बात ये है कि आपके तबले पर जो चढ़ा है न मेरी माँ की खाल से बना है। जब भी आपके तबले की गूँज सुनाई देती है मुझे लगता है जैसे मेरी माँ प्यार और दुलार भरी आवाज़ में मुझे पुकार रही है और मैं ख़ुशी से नाचने लगता हूँ...

थोड़ा सा अपनापन पाकर
मिट्टी इतना दे जाती है
मिट्टी–माणिक, मिट्टी मोती,
मिट्टी सोना उपजाती है
कल्पतरू है ये मिट्टी,
शाख़ों पर स्नेह खिलाती है
हम गुलाब होकर तो देखें,
मिट्टी ख़ुशबू हो जाती है

- इंदिरा किसलय

जीवन का मंत्र

माँ पूजा माँ आरती, माँ ही यज्ञ हवन।
माँ मंदिर भगवान माँ, माँ भक्ति माँ मन।।

माँ फूलों का खेत है, माँ ख़ुशबू का बाग़।
माँ छाया अमराई की, माँ सर्दी में आग।।

माँ का आँचल मेघ है, माँ की गोद बसंत।
मन सावन सा सिक्त है, माँ का प्रेम अनंत।।

काँटा मुझको जो लगा, माँ को चुभी कटार।
चोट ज़रा सी क्या लगी, माँ पर वज्र प्रहार।।

मुझे सुलाने ख़ुद जगी, चद्दर पलंग गवाह।
मुझे बनाने माँ चली, कितनी लम्बी राह।।

माँ मेरी रामायण है, गीता वेद पुराण।
माँ दर्शन अध्यात्म माँ, माँ ही है विज्ञान।।

माँ अध्ययन माँ ज्ञान है, माँ पुस्तक माँ छंद।
माँ को पढ़-पढ़ दूर हुए, मन के अन्तर्द्वन्द्व।।

माँ शक्ति का रूप है, माँ सांसें माँ तंत्र।
माँ श्लोकों सी शुद्ध है, माँ जीवन का मंत्र।।

चौधरी मदन मोहन सिंह 'समर'
भोपाल
(पुलिस महकमे में काम करने वाले समरजी संवेदनशील कवि भी हैं)

फूल, ख़ुश्बू, चाँद, जुगनू,
कहकशाँ भी साथ है
ये ज़मीं भी साथ है,
वो आसमाँ भी साथ है
इसलिये जन्नत के जैसा
लग रहा है मेरा घर
मेरे बच्चों के अलावा
मेरी माँ भी साथ है

- जौहर कानपुरी

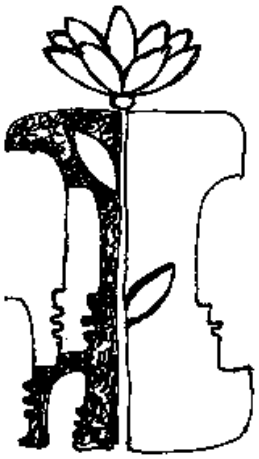

परिवार

पेड़ पर तने और शाख़ों के अतिरिक्त पत्तियाँ और फूल भी होते हैं। पत्तियाँ रहती हैं अलग-अलग। उनकी लाख उपयोगिता के बाद भी उनकी वह क़ीमत नहीं होती जो होती है फूल की। क्योंकि फूल में उसकी पंखुड़ी होती है इकट्ठी। पत्तियों की तरह अलहदा होने से कई गुना बेहतर है एक साथ गूँथकर फूल की तरह जीना। एकल परिवार और संयुक्त परिवार में फ़र्क़ समझने के लिये इससे बेहतर उदाहरण कोई हो ही नही सकता। जो परिवार इकट्ठे हैं उन घरों में जब त्यौहार आते है तो घर ही मेला बन जाता है। जब शादी होती है तो सजावट के लिए बिजली की नहीं रिश्तों कि लड़ियाँ ही काफ़ी होती है। एक बच्चा होता है तो उसे

बीसियों लोग प्यार से अलग नामों से पुकारने वाले घर में मौजूद होते हैं। होता यह है कि सख़्त मिट्टी की परत के नीचे हम सबके मन में एक प्रेम का बीज दबा होता है। वह अंकुरित होने के लिए बेताब रहता है। पर उसे चाहिए स्नेह और सद्भावना का जल। यह मिलते ही वह लहलहा उठता है एक सलोने पेड़ की तरह।

हमारे परिवारों में भी ऐसे कई लोग हैं जिनके काँपते हाथों में हमारे हाथों से ज़्यादा मज़बूती है जिनकी दुआओं ने पीढ़ियाँ तार दीं और जनकी छाँव तले न जाने कितनी कुम्हलातों को राहत बख़्शी। ये हैं परिवार के बुज़ुर्ग। इन्हें गुज़रे कल की नज़र से नही, अपने भविष्य के तौर पर देखिए। इनका साथ नेमत है, इनका हर बोल दुआ है। दैनिक भास्कर में... स्वर्णलता लाल एवं प्रेम कोमल बूलियाँ लिखते हैं कि ''वे एक ही क़िस्सा बार-बार इसलिए दोहराते हैं क्योंकि उनके पास नए अनुभव नहीं है- शायद आपके सौजन्य से। क्या आप उन्हें नई यादें दे पा रहें है? सोचियेगा। हालाँकि उनके पास गुज़रे अनुभवों और सीखों का पारस है, जो आपके आज को सुनहरा कर सकता है। पर क्या आप उस पारस को पहचान पाए है ?''

प्रसिद्ध सिने समीक्षक जयप्रकाश चौकसे कहते हैं कि- उम्र में एक ऐसा पड़ाव आता है जब मनुष्य को अतीत से अनुराग हो जाता है, वह यादों की जुगाली करना चाहता है। बुज़ुर्गों को ऐसी स्मृतियों को कुरेदने में उसे आनंद आता है जिनसे उसके चेहरे पर मुस्कान या आँखों में आँसू आ सकें। बुज़ुर्ग छोटी-छोटी बातों पर चर्चा इसलिए करते हैं ताकि आप उनकी बातों को सुनें। उनसे लम्बी नहीं, तो यह छोटी-सी बात ही कर लेंगे, इसी उतावल में वे बात को खींचते जाते हैं।

संयुक्त परिवार के विघटन के साथ ही बुज़ुर्गों की स्थिति दिनों-दिन दयनीय होती जा रही है। ऐसी बात नहीं है कि सारे बच्चे जानबूझकर अपने बुज़ुर्गों

की उपेक्षा करते हैं पर प्रतिस्पर्धापूर्ण भागदौड़ की आपाधापी में भावनाएँ पीछे छूटती जा रही हैं। नई पीढ़ी सोचती है, खाना-पीना, कपड़ा किराया सब तो दे रहे हैं, पर समय कहाँ से लाएँ? सच पूछिए तो एक उम्र के बाद न तो खाना ज़्यादा हो पाता है न ही कपड़ों का शौक़ रहता है। बुज़ुर्गो के पास तो उनका सुदीर्घ अतीत होता है और होती है उनकी भावनाओं की भाषा...

उस अतीत को बाँटने और भावनाओं को समझने की आवश्यकता है। क्या होता है यदि घर के बड़े-बूढ़े एक ही बात को वे बार-बार बताते हैं या आपको लगता है कि उनके पास कोई दूसरी बात नहीं है। आप अपना बचपन याद कीजिए। आपने एक प्रश्न कितनी ही बार पूछा होगा और उन्होने हर बार उसका उत्तर दिया होगा। 'क' कबूतर का सीखने के लिए बीसियों बार आपकी उंगली पकड़कर दोहराया होगा। आपके पोपले मुँह की हँसी और किलकारी से वे कितने आनंदित हो उठते थे। आज उनके पोपले मुँह की हँसी से आपको मित्रों के बीच शर्मिंदगी क्यों होती है ? आपकी जो हँसी उनके जीवन की उल्लसित प्रेरणा थी, आज ड्रांइग रूम में आपकी पार्टी और ठहाके होते हैं, तो किसी बंद कमरे में उपेक्षित बैठे उनके हृदय पर हथौड़े बरसते हैं, ऐसा क्यों ?

समय आगे ज़रुर बढ़ गया है पर इतना नहीं कि भावना शून्य हो जाए। घर में पूजा या अन्य कोई आयोजन हो रहा है, अड़ोसी-पड़ोसी पधारे हैं, तो वहाँ उन्हें भी नए कपड़ों के साथ ससम्मान विराजने को कहें, इसमें ही आपकी प्रतिष्ठा है। होली का अबीर उनके चरणों पर रखकर आशीर्वाद लीजिए, और बच्चों को भी दादा-दादी का स्नेहिल स्पर्श दिलवाइए। यह आपके भविष्य का सुरक्षा चक्र है जो सकारात्मकता की लहर से वातावरण को भर देगा। दीपावली का पहला दीया उनसे जलवाइए, सबके चेहरे दैदीप्यमान हो उठेंगे। आपको याद होगा कि किसी चाचा या

मामा के घर शादी पर उपस्थित न हो पाने की माफ़ी को आपने पिताजी से ही प्रेषित करने का कहा होगा। आख़िर उनके कहने में दम जो रहा होगा। यह दम इसलिए है क्योंकि बड़े घर की छत होते हैं, आपके संरक्षक। बड़ों का साया सिर पर हो तो किसी भी रिश्ते की कड़वाहट या क्रोध की आँच आप तक नहीं पहुँच पाती। सिर से यह छत हट जाए तो बच्चे चाहे पचास साल के ही क्यों न हो गए हों, उतना ही असुरक्षित महसूस करते हैं जितना उन्होंने मेले में पिता का हाथ छूट जाने पर महसूस किया होगा। याद रखियेगा बुज़ुर्ग हमारे सुरक्षा कवच हैं।

हम बुज़ुर्गों से इतने देवतुल्य प्रदर्शन की उम्मीद करते हैं कि उनका मानवीय स्वरुप ही नष्ट हो जाता है। उनकी महानता का आधार यह है कि मनुष्य होकर उन्होंने सीमाओं का विकास किया और सिद्ध किया कि इंसान के लिये कुछ भी असंभव नहीं है। हम महान लोगों को देवता क़रार कर देते हैं और एक मायने में उनके प्रयास का अर्थ समाप्त कर देते हैं। इसी प्रक्रिया में हम अपने नैतिक मूल्य उन पर थोप देते हैं। हम उनके महान प्रयासों से लाभान्वित होते हैं। उन्हें महिमामंडित करते हैं। हम भूल जाते हैं कि वे भी आख़िर इंसान हैं कोई भगवान नहीं। त्रुटि या भूल उनसे भी हो सकती है।

हर माता-पिता यह चाहता है कि ज़माने की ठोकर से उसने जो सीखा है वह सब अपने बच्चों को दे जाए! लेकिन संतान है कि दुनिया में ख़ुद धोखा ठोकर खाकर ही सीखना चाहती है। ख़ुद को मज़बूत बनाने के लिये यह ज़रूरी भी है। ऐसा करते समय बुज़ुर्गों से मिले अनुभव दिमाग़ के कम्प्यूटर के डेस्क टॉप पर रखकर चलेंगे तो उनकी राह निश्चित ही आसान हो जाएगी। एक बात हमेशा याद रखना जीवन में 'M' को हटाने पर हम 'OTHER' ही रह जाता है।

ममता का निर्झर है अम्माँ

धरती है, अम्बर है अम्माँ।
ममता का निर्झर है अम्माँ।

कभी न देखे दु:ख जायों के,
सहती हर ठोकर है अम्माँ।

बात हलाहल की आए तो,
खुद पी ले, शंकर है अम्माँ।

हाथ फेर दे, दर्द रहे ना,
जादू है, मंतर है अम्माँ।

जैसी जहाँ ज़रूरत, वैसी,
मोम, कभी प्रस्तर है अम्माँ।

सबको एक बार ही मिलता,
पूजा का अवसर है अम्माँ।

साया, फल दे जो आख़िर तक,
ऐसा ही तरूवर है अम्माँ।

पुत्र भले ना, श्रवण बने हों,
लेकिन ख़ुद काँवर है अम्माँ।

मंदिर भी है गुरूद्वारा भी,
मस्जिद, गिरजाघर है अम्माँ।

वरना घर होकर भी बेघर,
घर पर यदि नहीं है अम्माँ।

रत्नदीप खरे

इस तरह मेरे गुनाहों को वो धो देती है
माँ बहुत गुस्से में होती है तो रो देती है

- मुनव्वर राना

गोएथ ने एक जगह कहा है - ''बर्ताव वह आईना है जिसमें हम अपनी छवि प्रदर्शित करते हैं, हमारा व्यवहार, हमारी दिनचर्या, हमारे कार्यकलाप देखकर ही समाज अपनी नज़र में हमारी छवि बनाता है।'' वे बड़भागी हैं जिनके पास माँ है। जीवन का एक कटु सत्य है कि मनुष्य के पास जो उपलब्ध है, उसे उसकी क़द्र नहीं होती। जब माँ के रूप में भगवान हमारे घर में हैं तो हम उसे पत्थरों में ढूँडते फिरते हैं और जब वह हमारे पास से अचानक ओझल हो जाती है तो उसकी तस्वीरें संजोते फिरते हैं।

माँ तो जीवन की वह रेल है जो दौड़ती जा रही है, न जाने कब उसका वी.टी. स्टेशन आ जाए।

हम जितना अधिक उसके साथ रहकर हमारे और उसके आनंद को बढ़ा सकें कम है। नहीं होती हैं उसकी हमसे ढेर सारी माँगें। उसकी ख़ुशियाँ तो छोटी-छोटी बातों में छुपी हैं।

वे सपने जो क़ुर्बान कर दिये.... उस चंचल और महत्वाकांक्षी लड़की ने जो उसने देखे थे शादी से पहले, आओ उन सपनों में से कुछ एक तो साकार करने की कोशिश करें हम...

इससे पहले कि देर हो जाये।

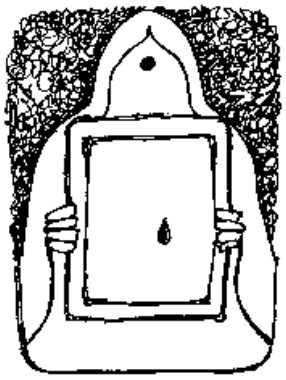

शीशा देने वाला

जब भी मैं रोया करता
माँ कहती,
ये लो शीशा
देखो इसमें
कैसी लगती है
अपनी रोनी सूरत
अनदेखे ही शीशा
मैं सोच-सोचकर
अपनी रोनी सूरत
हँसने लगता।
एक बार रोई थी माँ भी

नानी के मरने पर
फिर मरते दम तक
माँ को मैंने
खुलकर हँसते
कभी न देखा।
माँ के जीवन में शायद
शीशा देने वाला
अब कोई नहीं था।
सबके जीवन में ऐसे ही
खो जाता होगा
कोई शीशा देने वाला।

मुनि क्षमासागर

जब भी क़श्ती
मेरी सैलाब में आ जाती है
माँ दुआ करती हुई
ख़्वाब में आ जाती है

- मुन्नवर राना

कला समीक्षक श्री विनय उपाध्याय लिखते हैं कि धुंधवाते चूल्हे, खदबदाती हाँडी, बजती परातें, दरकते चौके, टपकते छप्पर, खुरदरे आँगन, धूल भरे चौगान....और उन सबके साथ जुगलबंदी करती, जद्दोजहद और जिजीविषा का जाप करती व्यक्तिवाचक संज्ञा माँ ही हो सकती है। संसार की अमरबेल जिस कोख से फूटती है, रिश्तों का समापन जहाँ से आकार लेता है, आख़री साँस तक जो अपने आँचल में पाह की प्रेमल पुलकन भरी पुकार सँवारती है, संवेदना के ऐसे अछोर सागर को क़लम की स्याही जब बूँद-बूँद सहेजती है तो काग़ज़ पर उभरा हर शब्द मंत्र बनकर उभरता है। आह और वाह एक साथ कौंधती है। कभी माँ की सूरत देखकर आँख और मन भीगने लगते हैं।

कविता की छोटी सी काया में करवट लेती माँ की गाढ़ी-गहरी और अपार स्मृतियों का झरोखा लिए श्री अनिल गोयल ने अपनी पुस्तक 'उस चौखट से' में माँ पर मन को छूने वाली अनेकों कविताएँ लिखी हैं।

उनमें से कुछ यहाँ...

मुरझाया तुलसी चौरा
माँडने धुंधले,
गंदुल दीया
सूखी बंदनवार,
सूनी मुंडेर
कालिख भरी लालटेन,
कूड़े का ढेर,
बासता हुआ आँगन
महकता था जब माँ थी।

विधवा बुढ़िया अचानक हो जाती माँ
पहली तारीख़ को जब लाती पेंशन,
जब होती बहू को जचकी
जब देवी माँ के दर्शन को जाता सारा परिवार
करती चौकीदारी घर की
विधवा बुढ़िया हो जाती माँ।

देखते ही देखते तस्वीर में तब्दील हो गई माँ
झाड़ू को चैन मिला, घर भर को आराम
सो गये सभी सई संझा, दूध उफनता रहा,
बन आई चूहे-बिल्लियों की,
चौके तक पहुँचे जूते,
जाले लगे लड्डू गोपाल में,
तब्दील हुआ सब कुछ देखते ही देखते

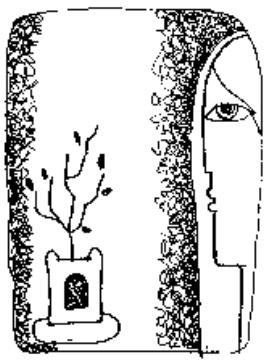

पति के ग़ुस्से से बचाती रही बेटे को,
बेटा मौन
गरजती है बहू माँ पर।
पति को काँधा देने चार जने आए
मेरे जने नहीं आए बस।

लोरियाँ सुनाकर सुलाती थी जिसे,
जागती है उसी की घुड़कियाँ सुन।

बाँझ स्त्री कोसती है भगवान को,
पूतों वाली ख़ुद को कोसती है।

साठ की उम्र पार की माँ ने,
छत्तीस की बहू ने हद पार की,
चालीस का बेटा शर्म पार कर गया।
सफ़ेद धोती-कुर्ता जँचता था बाबूजी पे,
सफ़ेद धारण कर बदरंग हुई माँ।

सिलसिला बिंदी से शुरू हुआ,
फिर चाभी, फिर सम्मान,
फिर घर, फिर कोठरी, फिर सम्बोधन
फिर पोटली, क्रमबद्ध छीना गया माँ से।

कितनी बार कहूँ
नहीं माँ ऐसे नहीं बोलते,
ऐसे नहीं बैठते माँ,
नहीं पहनते-ओढ़ते ऐसे,
थक गया हूँ समझाते-समझाते,
जो कहता हूँ मानती नहीं तुम,
तुम जो करतीं भाता नहीं मुझे,
ऐसे कैसे निभेगा माँ,
माँ अब नहीं निभेगा।

मेरे ही दूध से मिला बल,
मुझ पर ही आजमाया गया....

बीजिंग ओलम्पिक में स्वर्ण पदक जीत लेने की क़ामयाबी के तुरंत बाद जब मैंने पलटकर देखा तो मेरे क़दमों के निशान नहीं थे उनकी जगह मैंने जो देखा तो दंग रह गया, वह थे हथेलियों के निशान । यह वह सहारे हैं जिन पर चलकर मैं यहाँ तक पहुँचा, वह हथेली भी मेरी माँ की।

सख्त राहों में भी आसान सफर लगता है,
ये मेरी माँ की दुआओं का असर लगता है,
मैंने जिस वक्त माँ के चरणों में किया सजदा,
आसमानों से भी ऊँचा मेरा सिर लगता है ।

- राजेन्द्र बोहरा 'सारस्वत'

माँ एक ऐसा शब्द है जिसके बारे में अगर लिखते रहें तो संसार के सारे काग़ज़ और सारी स्याही कम पड़ जाएगी लेकिन एक वाक़या ऐसा है जिसे पढ़ लेने या सुन लेने के बाद माँ पर लिखने के लिए कुछ नहीं बच जाता।

अख़बार पढ़ते हुए चाय पीना मेरी दिनचर्या में शुमार हो गया है। अख़बार चाय में तरावट ला देता है। कुछ माह पहले की बात है अख़बार पढ़ते-पढ़ते चाय की प्याली थामा हाथ काँपने लगा। ख़बर कुछ इस तरह थी- तमिलनाडु की राजधानी चेन्नई में 36 साल की तम्मी चेलवी ने पंखे से लटककर आत्महत्या कर ली। कारण यह था कि उसके दो बेटे कुमारन 17 वर्ष और मोहन 15 वर्ष दृष्टिहीन थे। चेलवी और उसके पति ने जी तोड़ कोशिश भी की कि उनके बेटों को कहीं से आँखें दान में मिल जाएँ। लेकिन कहीं बात नहीं बनी। माँ को सब्र कहाँ। अंधे बच्चों की तकलीफ़ देखते हुए उसका तो एक-एक दिन एक-एक साल के बराबर गुज़र रहा था। उसने एक पत्र लिखकर फाँसी लगा ली। उसकी अंतिम इच्छा थी कि उसकी दोनों आँखें निकाल कर उसके दोनों बेटों में बाँट दी जाए ताकि उसके बेटे इस दुनिया का उजाला देख सकें।

कानों में पुराना फिल्मी गीत गूँजने लगा - ''तुझको नहीं देखा हमने मगर, हमें इसकी ज़रूरत क्या होगी, ऐ माँ, ऐ माँ तेरी सूरत से अलग भगवान की सूरत क्या होगी.....''

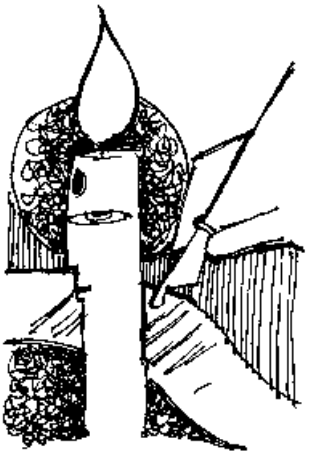

शायरों के क़लम से...

वतन की मिट्टी का वो 'क़र्ज़' क्या चुकाएँगे
जो माँ के दूध का हक़ भी अदा नहीं करते
- रईस अंसारी

♦

क्या सीरत क्या सूरत थी, माँ ममता की मूरत थी
पाँव छुए और काम हुए, अम्मा एक महूरत थी
- मंगल नसीम, दिल्ली

♦

ठंडे दिल से सोच के देखो क्या होगा जब कल के लोग
पूछेंगे क्यों नस्ल है गूंगी तुम तो सुख़नवर कितने थे
एक गिरा था आँख से माँ की आँसू के पत्थर बह निकले
तुम क्या जानो ऐसे क़तरे आँख के अंदर कितने थे
- हैदर

♦

घास पर खेलता है बच्चा, पास में बैठी माँ मुस्कुराती है
फिर न जाने क्यों ये दुनिया, काबा-ओ-सोमनाथ जाती है
- निदा फ़ाज़ली

♦

मुझको यक़ीं है सच कहती थीं, जो भी अम्माँ कहती थीं
जब मेरे बचपन के दिन थे, चाँद में परियाँ रहती थीं
- जावेद अख़्तर

♦

शर्त लगी जब एक शब्द में दुनिया लिख देने की
सबने दुनिया लिख डाला मैंने तो सिर्फ़ माँ लिखा
- अज्ञात

♦

मैं रोया परदेस में, भीगा माँ का प्यार
दुःख ने दुःख से बात की, बिन चिट्ठी बिन तार
- निदा फ़ाज़ली

♦

मुद्दतों बाद मयस्सर हुआ माँ का आँचल
मुद्दतों बाद हमें नींद सुहानी आई
- इक़बाल अशहर

नारी जननी श्रद्धा की ममता उसकी बेटी
किन आँखों से देखूँ तुझको मेरी आँखें छोटी
- अज्ञात

♦

धुएँ को अब्र और ग़म को मसर्रत करते रहते हैं
क़लंदर हैं जहन्नुम को भी जन्नत करते रहते हैं
हमें इन झुर्रियों में आयतों का अक्स दिखता है
हम अपनी माँ के चेहरे की तिलावत करते रहते हैं
- जौहर कानपुरी

♦

पत्थर उबालती रही एक माँ सारी रात
बच्चे फ़रेब खाके चटाई पे सो गये
- अज्ञात

♦

माँ, ठहर नहीं सकता एक पल भी अब गाँव में
तेरी बीमारी में यूँ ही छुट्टियाँ कट जाएँगी
- अशोक अंजुम

♦

इस तरह बेफ़िक्र हो दफ़्तर गये बेटा-बहू
घर में माँ ताले की सूरत और बच्चे चाबियाँ
- हरेराम समीप

♦

माँ जो मुझसे रूठी है मैं उसे मना लूँगी
मोम को पिघलने में देर कितनी लगती है
- अज्ञात

♦

ये दौलतआदमी की मुफ़लिसी को दूर करती है
यही दौलत मगर कमज़र्फ़ को मग़रूर करती है
सभी ख़ुश हैं कि मैं परदेस जाकर लाऊँ ख़ुशहाली
मगर इक माँ है जो ये शर्त नामंज़ूर करती है
- जौहर कानपुरी

एक दौर की अन्नपूर्णा को दूसरे दौर में
हाथ क्यों पसारने पड़ते है?

- संतोष गर्ग

♦

मंज़िल की हर तलाश, जीवन के हर सफ़र में
पाँव मेरे उठते हैं–तुम चलती हो
राह की थकन लिए, धूप में चलते हुए
शरीर मेरा होता है–तुम जलती हो

- कर्नल वी.पी. सिंह

♦

लोग यूँ ही ख़फ़ा नहीं होते
आपकी भी ख़ता रही होगी
हादसों से मुझे बचा लाई
वो किसी की दुआ रही होगी
ख़ैरियत से कटे सफ़र मेरा
आज माँ निर्जला रही होगी

- अज्ञात

♦

अमावस का मतलब बिटिया को
भूखी माँ ने यूँ समझाया...
भूख की मारी रात अभागन
आज चाँद को निगल गयी है

- अज्ञात

♦

बेटी बनाके लाये थे लेकिन ख़बर न थी
बेटा मेरा दबा के, बहू बैठ जाएगी

- सग़ीर मंजर, खण्डवा

♦

जल रहे हैं माँ की आँखों में मोहब्बत के चिराग़
उसने दुनिया में जन्नत का नज़ारा रख दिया

- असर सिद्दिक़ी

ख़ुदा ने यह सिफ़त दुनिया की हर औरत को बख़्शी है
वो पागल भी अगर हो जाये, बच्चे याद रहते हैं

♦

बरबाद कर दिया हमें परदेस ने मगर
माँ सबसे कह रही है के बेटा मज़े में है

♦

किसी के पास आते ही दरिया सूख जाते हैं
किसी की एड़ियों से रेत में चश्मा निकलता है
दुआएँ माँ की पहुँचाने को मीलों मील जाती हैं
के जब परदेस जाने के लिये बेटा निकलता है

♦

ज़रा सी बात है लेकिन हवा को कौन समझाए
दीये से मेरी माँ मेरे लिये काजल बनाती है
सुना है जबसे तय होते हैं रिश्ते आसमानों में
वो पगली उंगलियों से रेत में बादल बनाती है

♦

शायद ये नेकियाँ हैं हमारी कि हर जगह
दस्तार के बग़ैर भी इज़्ज़त वही रही
खाने की जो चीज़ें माँ ने भेजी हैं गाँव से
बासी भी हो गई हैं पर लज़्ज़त वही रही

♦

मैंने रोते हुए पोंछे थे किसी दिन आँसू
मुद्दतों माँ ने नहीं धोया दुपट्टा अपना

♦

वो तो लिखा के लाई है क़िस्मत में जागना
माँ कैसे सो सकेगी, के बेटा सफ़र में है

♦

न सुपारी नज़र आई न सरौता निकला
माँ के बटुए से दुआ निकली वज़ीफ़ा निकला

– मुनव्वर राना

ऐ, अंधेरे देख ले मुँह तेरा काला हो गया
माँ ने आँखें खोल दी घर में उजाला हो गया

♦

मेरी ख़्वाईश है कि मैं फिर से फ़रिश्ता हो जाऊँ
माँ से इस तरह लिपट जाऊँ कि बच्चा हो जाऊँ

♦

बुलंदी देर तक किस शख़्स के हिस्से में रहती है
बहुत ऊँची इमारत हर घड़ी ख़तरे में रहती है
ये ऐसा क़र्ज़ है जिसकोअदा मैं कर नहीं सकता
मैं जब तक घर न लौटूँ माँ मेरी सजदे में रहती है

♦

मिट्टी में मिला दे कि जुदा हो नहीं सकता
अब इससे ज़्यादा मैं तेरा हो नहीं सकता
देहलीज़ पर रख दी है किसी शख़्स ने आँखें
रोशन तो कोई इतना दिया हो नहीं सकता

♦

मैदान छोड़ देने से मैं बच तो जाऊँगा
लेकिन जो ये ख़बर मेरी माँ तक पहुँच गई

♦

मुझे कढ़ाई किये तकिये की क्या ज़रूरत है
किसी का हाथ अभी मेरे सर के नीचे है

♦

बुज़ुर्गों का मेरे दिल से अभी तक डर नहीं जाता
कि जब तक जागती रहती है माँ मैं घर नहीं जाता

♦

मोहब्बत करते जाओ बस यही सच्ची इबादत है
मोहब्बत माँ को भी मक्का-मदीना मान लेती है

♦

परदेस जाने वाले कभी लौट आएँगे
लेकिन इस इन्तज़ार में आँखें चली गईं

मुनव्वर राना

शहर के रस्ते हों चाहे गाँव की पगडंडियाँ
माँ की उंगली थामकर चलना अच्छा लगता है

♦

अभी मौजूद है इस गाँव की मिट्टी में ख़ुद्दारी
अभी बेवा की ग़ैरत से महाजन हार जाता है

♦

उछलते खेलते बचपन में बेटा ढूँढती होगी
तभी तो देखकर पोते को दादी मुस्कुराती है

♦

देख ले ज़ालिम शिकारी, माँ की ममता देख ले
देख ले चिड़िया तेरे दाने तलक तो आ गई

♦

ख़ुद को इस भीड़ में तन्हा नहीं होने देंगे
माँ तुझे हम अभी बूढ़ा नहीं होने देंगे

♦

लिपट के रोती नहीं हैं कभी शहीदों से
ये हौसला भी हमारे वतन की माँओं में है

♦

तेरे दामन में सितारे हैं तो होंगे ऐ फ़लक
मुझको अपनी माँ की मैली ओढ़नी अच्छी लगी

♦

परदेस जा रहे हो तो तावीज़ बाँध लो
कहती हैं माँएँ बच्चों से अपने पुकार के

♦

कुछ नहीं होगा तो आँचल में छुपा लेगी मुझे
माँ कभी सर पे खुली छत नहीं रहने देगी

♦

अगर किसी की दुआ में असर नहीं होता
तो मेरे पास से क्यों तीर आके लौट गया

मुनव्वर राना

दर्द बच्चों का कोई और कहाँ समझे है
जितनी शिद्दत से किसी बात को माँ समझे है
बावजूद इसके भी तकलीफ़ उसे मिलती है
माँ के पैरों तले जन्नत है जहाँ समझे है

♦

नज़रअंदाज़ अपने घर में मेरी जात न होती
अगर माँ ज़िंदा होती तो कभी ये बात न होती

♦

उन बच्चों की सुनता है ख़ुदा जल्द दुआएँ
जिन बच्चों की बचपन में गुज़र जाती है माँएँ

♦

असर से दूर रहते हैं हमेशा वो बलाओं के लिये
रहते हैं अपने साथ जो तोशे दुआओं के

♦

बे-हुनर से मुझे बा-हुनर कर गई
मेरी माँ की दुआ थी असर कर गई
इस तरह ज़िन्दगी उसने सींची मेरी
एक पौधे से मुझ को शजर कर गई

♦

जिसके क़दमों तले दुनिया में मेरी जन्नत थी
दादी अक्सर यही कहती हैं भली औरत थी

- सुफ़यान क़ाज़ी, खण्डवा

धूप को साया ज़मीं को आसमाँ करती है माँ
हाथ रखकर मेरे सर पर सायबाँ करती है माँ
मेरी ख़्वाहिश और मेरी ज़िद उसके क़दमों पर निसार
हाँ की गुंजाइश न हो तो फिर भी हाँ करती है माँ

♦

गर्म इस रिश्ते के साए, सर्द इस रिश्ते की धूप
माँ को आता है पसीना देखकर बेटे की धूप
ध्यान रखना जल न जाएँ तेरे गमले के गुलाब
गर तेरे आँगन में उतरी जब कहीं पैसे की धूप

♦

वो रुलाकर हँस न पाया देर तक
जब मैं रो कर मुस्कराया देर तक
भूखे बच्चों की तसल्ली के लिये
माँ ने फिर पानी पकाया देर तक

♦

हम तो उन्हें शायर भी तसलीम नहीं करते
जो अपने बुज़ुर्गों की ताज़ीम नहीं करते

– नवाज़ देवबंदी

घर से चलने का
इरादा ही किया था मैंने
माँ के होठों पर
दुआओं का सफ़र जारी हुआ

♦

बरबाद जब हुआ तो
उसी माँ के पास था
वो शख़्स जो कह रहा था
मेरी कोई माँ नहीं

♦

माँ के क़दमों के नीचे जन्नत है
बाप के सर पर है जहाँ का बोझा

♦

हर तरफ़ नफ़रतों का साया था
तुमने कैसा ये गुल खिलाया था
एक-एक साल उस पे भारी है
जिसने माँ-बाप को सताया था

♦

आज माँ ने मुझे दुआएँ दी
आज सब कुछ कमा लिया मैंने

♦

उम्र भर सब कुछ किया
और माँ की ख़िदमत की नहीं
इस तरह हासिल जहाँ में
हमने जन्नत की नहीं

- माजिद देवबंदी

क्या बतलाऊँ कितना प्यारा मैं भी हूँ
अपनी माँ की आँख का तारा मैं भी हूँ
हारून फ़िराक़, खण्डवा

♦

माँ की बातों का भला किसको बुरा लगता है
उस का हर लफ़्ज़ मुहब्बत है, दुआ लगता है
तफ़ज़ील ताबिश, बुरहानपुर

♦

माँएँ कहती थीं कि तूफ़ानों का रूख़ मोड़ आओ
माँएँ कहती हैं कि लहरों की तरफ़ मत जाना
कलाम आजर, बुरहानपुर

♦

जब तक के मेरे हाथ में छाला नहीं आता
मुँह तक मेरे बच्चों के निवाला नहीं आता
जलील तालिब, इंदौर

♦

बीवी–बच्चों का तक़ाज़ा भी ज़रूरी है
मगर बूढ़े माँ–बाप को तन्हा नहीं छोड़ा करते
हारून फ़िराक़, खण्डवा

♦

माना कि अर्थ सिद्ध है शब्दों पर अधिकार हमें है
पर माँ से कैसे बतलाएँ कितना प्यार हमें है
- कुमार विश्वास

एक कविता मेरी भी...

कोई तो है

बचपन की सर्द रातों में
होते ही ठंड का अहसास,
कोई ओढ़ा जाता है मुझे रज़ाई,
और मुझे आ जाती है नींद सुहानी
हर रात-हर बार।

सफ़र की तैयारी करते - करते
लाख़ मनाही के बावजूद
रख देता है कोई एक डिब्बा,
रास्ते में पेट कुलबुलाते ही
मिटा देते हैं मेरी भूख
उसमें रखे पराठे और अचार।

जीवन में विषमता आने पर
जब बंद नज़र आए सारे रास्ते,
तभी रख गया कोई मेरे वास्ते
कुछ मुड़े-तुड़े नोट, ज़ेवर, एफ़.डी.आर.
और कर गया जीवन में अतुल उपकार।

कुटुम्ब में साथ रहते-रहते
जब फटने लगी प्रेम की चादर,
तभी कोई आया सुई-धागा लेकर
और जोड़ गया फिर से, पूरा परिवार।

बीमारी में, मेरी लाचारी में
जब हार चुका सारी हिम्मत,
कोई आया और सिर सहला कर
कर गया मुझमें ऊर्जा संचार।

कोई शक्ति तो है...
जो बैठी है मेरे ही घर में,
और मैं मूरख-नादान
ढूँढ रहा हूँ उसे
मंदिर-मस्जिद और
गुरूद्वारे-गिरजाघर में।

आलोक सेठी

“

पिता पेड़ हैं
हम शाख़ाएँ हैं उनकी
माँ छाल की तरह
चिपकी हुई है पूरे पेड़ पर
जब भी चली है कुल्हाड़ी
पेड़ या उसकी शाख़ाओं पर
माँ ही गिरी है सबसे पहले
टुकड़ा-टुकड़ा होकर

”

– हरीशचन्द्र पाण्डे

पुस्तक से बेहतर कोई उपहार नहीं....

हमारी अन्य किताबों की तरह इस प्रकाशन का उद्देश्य भी व्यावसायिक नहीं है। इस पुस्तक की बिक्री से जो राशि प्राप्त होगी उसे ऐसे सुपात्रों को अच्छा साहित्य वितरण करने में लगाया जाएगा जो पढ़ना तो चाहते हैं पर पुस्तकें ख़रीदने में असमर्थ हैं।

यदि आप अपने प्रियजनों को सौजन्यस्वरूप, जन्मदिन, विवाह समारोह, स्मृति या रिटर्न गिफ़्ट में इसका वितरण करना चाहते हैं तो ५० से अधिक संख्या में ख़रीदने पर लागत मूल्य यानि कि मात्र ५० रुपये में उपलब्ध हो जाएँगी। पुस्तक के प्रथम भाग पर आपकी भावनानुसार पेज मैटर एवं चित्र भी मुद्रित किया जा सकता है। जीवन में पुस्तक से बेहतर मित्र या भेंट दूसरी नहीं है। मातृ-शक्ति के प्रति आपकी आदरांजलि के पुनीत हवन में यदि हम आपके सहभागी बन सकें तो बेहद प्रसन्नता होगी...।

संपर्क :
आलोक सेठी, हिन्दुस्तान अभिकरण
पन्धाना रोड, खण्डवा (म.प्र.)
फ़ोन : 0733-2223003, 2223004, 2223005 (ऑफ़िस)
0733-2244002, 2244003 (निवास)
मोबाइल : 094248-50000
ई-मेल : hindustanabhikaran@yahoo.co.in
शाखा : शनवारा, बुरहानपुर : 07325-254007, 254008
बस स्टैण्ड के सामने, हरदा : 0755-223522
सिंहगढ रोड, पुणे : 094226-56391

प्रकाशक : क्वॉलिटी पब्लिशिंग कंपनी
104, आराधना नगर, कोटरा, भोपाल - 2
फ़ोन : 0755-2771977, 2542556, 093297-70850

“

माँ जो मुझसे रूठी है,
मैं उसे मना लूँगा
मोम को पिघलने में देर
कितनी लगती है।

”

- अज्ञात